मूल्य : ₹ 50

अक्टूबर 2025

आई.एस.ओ. 9001: 2015 संगठन

भाकृअनुप ICAR

खेती

बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ

• इस अंक में •

- मानव स्वास्थ्य में लाभकारी गेहूं घास
- फसल अवशेषों का बाह्य-स्थल प्रबंधन
- शूकर पालन से बढ़ाएं आमदनी
- बकरीपालन से आदिवासी कृषकों का उत्थान

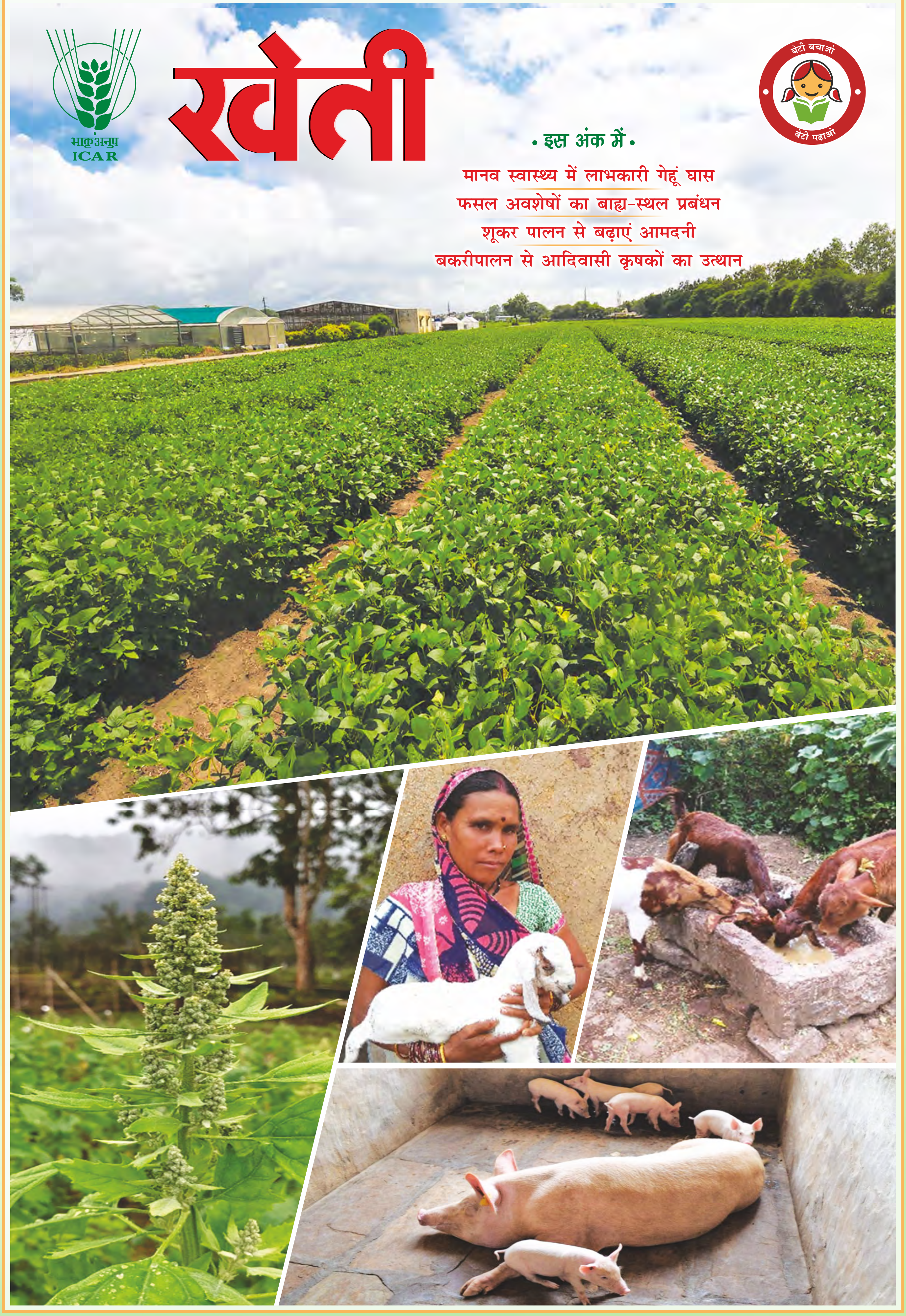

/InAgrisearch | /user/icarindia | officialicarindia | www.icar.org.in | /icarindia

शूकर पालन से आत्मनिर्भरता

आज के समय में जब युवा पीढ़ी शहरी जीवन और आधुनिक नौकरियों की ओर तेजी से आकर्षित हो रही है, वहीं असोम के एक छोटे से गांव की 18 वर्षीय छात्रा नम्रता जी ने अपने संकल्प और जज्बे से एक अनोखी मिसाल कायम की है। सुश्री नम्रता जी ने यह साबित किया है कि अवसर और साधन सीमित होने पर भी यदि इच्छा शक्ति प्रबल हो, तो सफलता निश्चित है। पढ़ाई में उत्कृष्ट प्रदर्शन के साथ-साथ उन्होंने पारंपरिक पशुपालन को वैज्ञानिक पद्धतियों से जोड़कर एक नई दिशा दी है। जहां उनकी पीढ़ी की अधिकांश लड़कियां खेती या शूकर पालन को आकर्षक नहीं मानती, वहीं नम्रता जी ने इस क्षेत्र में न केवल अपनी रुचि दिखाई बल्कि इसे आर्थिक आत्मनिर्भरता का साधन भी बनाया।

शूकर पालन को अक्सर ग्रामीण समुदाय में सीमित संभावनाओं वाला व्यवसाय माना जाता है, लेकिन नम्रता जी ने इसे आत्मनिर्भरता और नवाचार का प्रतीक बना दिया। इनकी मेहनत और वैज्ञानिक दृष्टिकोण साबित करते हैं कि यह पारंपरिक व्यवसाय भी युवाओं को सम्मान, आय और भविष्य की नई दिशा प्रदान कर सकता है।

नम्रता जी बचपन से ही जिज्ञासु और मेहनती रही हैं। परिवार की आर्थिक स्थिति सामान्य होने के बावजूद इन्होंने अपने सपनों से कभी समझौता नहीं किया। 10वीं कक्षा में 87 प्रतिशत अंक प्राप्त कर उन्होंने यह सिद्ध किया कि वे पढ़ाई में भी प्रतिभाशाली हैं। पढ़ाई के साथ-साथ उन्होंने अपने पिता को सहयोग करना शुरू किया और धीरे-धीरे शूकर पालन को गंभीरता से अपनाया।

शावकों के पोषण और सुरक्षा पर विशेष ध्यान

भावी कदम

नम्रता जी का सपना यही तक सीमित नहीं है। वे अपने फार्म को ब्रीडर सुविधा के रूप में विकसित करना चाहती हैं, जहां गुणवत्तापूर्ण नस्लें तैयार कर उन्हें बाजार में बेचा जा सके। इससे न केवल उनकी आय बढ़ेगी, बल्कि आसपास के किसानों को भी लाभ मिलेगा। इसके साथ ही वे अपनी उच्च शिक्षा जारी रखकर एक सफल कृषि उद्यमी और प्रेरणादायी आदर्श बनना चाहती हैं। नम्रता जी की सफलता यह संदेश देती है कि मेहनत, लगन और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से कोई भी युवा परंपरागत क्षेत्रों में नई संभावनाएं उत्पन्न कर सकता है। शूकर पालन, जिसे पहले कम आकर्षक व्यवसाय माना जाता था, अब उनके प्रयासों से आत्मनिर्भरता और नवाचार का प्रतीक बन चुका है।

वैज्ञानिक तकनीक

नम्रता जी ने शूकर पालन को केवल परंपरा के रूप में नहीं अपनाया, बल्कि इसे वैज्ञानिक दृष्टिकोण से विकसित करने का संकल्प लिया। वर्तमान में इनके पास 2 जंगली शूकर, 4 मादा शूकर और 12 पशुपालक इकाइयां हैं। शैक्षणिक अवकाश का उपयोग करते हुए नम्रता जी भाकृअनुप-राष्ट्रीय शूकर अनुसंधान संस्थान, रानी (गुवाहाटी) पहुंची और वहां वैज्ञानिक शूकर पालन एवं कृत्रिम गर्भाधान पर प्रशिक्षण प्राप्त किया। इनकी सबसे बड़ी उपलब्धि यह रही कि इन्होंने लागत कम करने पर विशेष ध्यान दिया। सामान्य किसान जहां महंगा चारा खरीदते हैं, वहीं नम्रता जी ने स्थानीय स्तर पर उपलब्ध चावल की पॉलिश और मछली बाजार के अपशिष्ट को पकाकर शूकरों को खिलाना शुरू किया। इससे न केवल खर्च कम हुआ, बल्कि शूकरों के स्वास्थ्य और उत्पादन में भी सुधार हुआ।

संस्थान से सहयोग और जैव सुरक्षा उपाय

नम्रता जी को भाकृअनुप-राष्ट्रीय शूकर अनुसंधान संस्थान से एससीएसपी कार्यक्रम के तहत जैव सुरक्षा किट और कृषि उपकरण भी प्राप्त हुए। इनका उपयोग करके इन्होंने अपने फार्म को साफ-सुथरा और सुरक्षित बनाए रखा।

जिज्ञासा से समृधि

नवाचार और अजोला उत्पादन

नम्रता जी ने शूकर पालन को अजोला की खेती से जोड़कर और भी सफल बना दिया। अजोला एक जलकुंभी जैसा पौधा है, जिसमें प्रोटीन और खनिज प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। नम्रता जी ने इसका उपयोग शूकरों के लिए सस्ते और पौष्टिक चारे के रूप में किया। वे सूखे अजोला को सप्ताह में एक बार पोषण पूरक के रूप में देती हैं। इस पहल ने न केवल चारे की लागत घटाई, बल्कि शूकरों की वृद्धि दर को भी बढ़ाया।

फार्म की नियमित सफाई और कीटाणु शोधन पर उनका विशेष ध्यान रहा। यही कारण है कि जहां आसपास के कई फार्म 'अफ्रीकन स्वाइन फीवर' जैसी गंभीर महामारी से प्रभावित हुए वहीं नम्रता जी का फार्म पूरी तरह सुरक्षित रहा। उनकी दूरदर्शिता और अनुशासन ने उन्हें इस संकट से बचाया।

स्वच्छता और कीटाणुशोधन

आर्थिक सफलता की उड़ान

नम्रता जी की मेहनत का सबसे बड़ा प्रमाण उनकी आर्थिक सफलता है। पिछले वर्ष इन्होंने 32 शावक बेचकर 1,44,000 रुपये अर्जित किए। साथ ही दो शूकर बेचकर 60,000 रुपये कमाए और कुल मिलाकर आय 2 लाख रुपये से अधिक रही। यह उपलब्धि न केवल इनके परिवार की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने वाली थी, बल्कि इससे इनका आत्मविश्वास भी बढ़ा। अब वे अपने परिवार की मदद करने के साथ-साथ अपनी पढ़ाई भी स्वयं की आय से पूरी कर पा रही हैं।

(स्रोत: भाकृअनुप की वेबसाइट)

ICAR भाकृअनुप

खेती

कृषि विज्ञान द्वारा ग्रामोत्थान की मासिक पत्रिका

वर्ष: 78, अंक: 6, अक्टूबर 2025

संपादन सलाहकार समिति

1. **डा. राजबीर सिंह** — **अध्यक्ष**
   उप-महानिदेशक (कृषि विस्तार)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
2. **डा. अनुराधा अग्रवाल** — **सदस्य**
   परियोजना निदेशक (डीकेएमए)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
3. **डा. विनोद कुमार सिंह** — **सदस्य**
   निदेशक
   भाकृअनुप-क्रीडा, हैदराबाद
4. **डा. धीर सिंह** — **सदस्य**
   निदेशक
   भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
5. **डा. के.के. सिंह** — **सदस्य**
   कुलपति
   सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि विश्वविद्यालय
   मोदीपुरम, मेरठ
6. **श्री हर्षवर्धन** — **सदस्य**
   प्रधान जनसंपर्क अधिकारी, इफको, नई दिल्ली
7. **श्री रितु राज** — **सदस्य**
   कृषि पत्रकार
8. **सुश्री नीलम त्यागी** — **सदस्य**
   प्रगतिशील किसान
9. **सुश्री सुनीता अरोड़ा** — **सदस्य सचिव**
   प्रभारी, हिन्दी संपादकीय एकक (डीकेएमए)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

प्रधान संपादक
डा. अनुराधा अग्रवाल
संपादक
सुनीता अरोड़ा
संपादन सहयोग
गजेन्द्र

प्रभारी (उत्पादन एकक)
पुनीत भसीन

प्रभारी (व्यवसाय एकक)
भूपेन्द्र दत्त
दूरभाष: 011-25843657
E-mail: businessuniticar@gmail.com
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12

एक प्रति: रु. 50.00 वार्षिक : रु. 500.00
विशेषांक : रु. 200.00

E-mail : khetidipa@gmail.com

डिस्क्लेमर
लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुनः प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों-कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें। समस्त विवादों के लिए न्याय क्षेत्र दिल्ली होगा।

इस अंक में

निदेशक की कलम से

पोषण की पहल, साझेदारी के संग, **अनुराधा अग्रवाल**

4 औषधीय
मानव स्वास्थ्य में लाभकारी गेहूं घास
आरती कुमारी, शशांक शेखर सोलंकी, अनुपम आदर्श, सीमा **और** रमेश कुमार शर्मा

13 दृष्टिकोण
कार्बन खेती से पर्यावरण संरक्षण
गीता सिंह **और** काव्या टी.

6 उपयोगी
फसल अवशेषों का बाह्य-स्थल प्रबंधन
प्रदीप कुमार, अर्डिथ शंकर, स्वीटी कुमारी, सौरभ कुमार **और** अभिनव कुमार सिंह

16 संभावनाएं
अरुणाचल प्रदेश में क्विनोआ की खेती
रघुवीर सिंह **और** नीलम शेखावत

10 उद्यमिता
शूकर पालन से बढ़ाएं आमदनी
विक्रमजीत सिंह, अशोक चौधरी, सुरेश चंद कांटवा **और** गुलाब चौधरी

18 फार्मर फर्स्ट
बकरीपालन से आदिवासी कृषकों का उत्थान
पी. मूवेंथन, हेमप्रकाश वर्मा **और** सुमन सिंह

विषय-सूची

21 पोषण

जैव उर्वरकों से बढ़ाएं मृदा एवं फसल स्वास्थ्य

रुपेश कुमार मीना, अमर सिंह गोदारा, वाई. के. सिंह **और** अमीत कुमावत

25 हरा सोना

धान उत्पादन में अजोला की उपयोगिता

वीर सिंह, वीरेंद्र सिंह **और** सत्यभान सिंह

27 दलहन

उतेरा विधि से खेसारी की उन्नत खेती

अमितेश कुमार सिंह, राकेश कुमार, रवि शंकर, सूर्य भूषण **और** अमित कुमार सिंह

सफलता गाथा

आवरण II

शूकर पालन से आत्मनिर्भरता

29 नियंत्रण

सोयाबीन में समेकित कीट प्रबंधन

रूपसिंह, अरविन्द नागर, राकेश कुमार बैरवा, इरफान खान **और** सरिता

32 कृषि कैलेण्डर

अक्टूबर के मुख्य कृषि कार्य

राजीव कुमार सिंह, कपिला शेखावत, अंजली पटेल, एस.एस. राठौर **और** ऋषभ सिंह चंदेल

सामयिक

आवरण III

कृषि खबरें, देश-विदेश की

निदेशक की कलम से

पोषण की पहल, साझेदारी के संग

16 अक्टूबर को प्रतिवर्ष मनाया जाने वाला विश्व खाद्य दिवस इस वर्ष एक खास संदेश लेकर आया है ''Hand in Hand for Better Foods and a Better Future'' अर्थात ''हाथ में हाथ, बेहतर आहार और बेहतर भविष्य के लिए''। यह विषय एक चुनौती और संकल्प है कि अकेले प्रयासों से नहीं बल्कि साझेदारी और सहयोग से ही हम एक ऐसी दुनिया बना सकते हैं, जहां हर पेट भरे, हर शरीर पोषित हो और सबका भविष्य सुरक्षित रहे। भारत में, जहां जनसंख्या सर्वाधिक है और भूख, गरीबी, कुपोषण अभी भी गंभीर समस्या है, यह विषय विशेष रूप से प्रासंगिक है।

दुनिया में आज भी करोड़ों लोग भूखे सोते हैं, जबकि दूसरी ओर कई टन आहार की बर्बादी होती है। यह विरोधाभास तब तक बना रहेगा, जब तक सभी–सरकार, किसान, उद्योग, समाज और आम नागरिक–एक साथ कदम नहीं बढ़ाते। भारत के संदर्भ में बात करें तो कुपोषण, भुखमरी और खाद्य असमानता आज भी गंभीर समस्याएं हैं, लेकिन समाधान भी हमारे पास है:

- शिक्षा और जागरूकता बढ़ानी चाहिए कि पौष्टिक आहार क्या है, किस तरह विशेष पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है और किस तरह स्थानीय स्रोतों से ये उपलब्ध किये जा सकते हैं।
- स्थानीय कृषि का सशक्तिकरण–किसानों को उन्नत बीज, प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता, बाजारों तक पहुंच सुनिश्चित करना।
- नीति निर्माता ऐसी योजनाएं बनाएं, जो संतुलित आहार, पोषण सुरक्षा और टिकाऊ उत्पादन को प्राथमिकता दें।
- उपभोग, भंडारण और परिवहन के चरणों में आहार की बर्बादी को कम करना होगा। इसके लिए शीत श्रृंखला, पैकेजिंग, बेहतर प्रसंस्करण एवं भंडारण तकनीकें महत्वपूर्ण हैं।
- उद्योग और व्यापार क्षेत्रों को जिम्मेदार बनाना चाहिए ताकि सुरक्षित, पौष्टिक, स्वच्छ और पर्यावरण अनुकूल उत्पादों की आपूर्ति सुनिश्चित हो।

इस सहयोग और साझेदारी में सरकारों, किसानों, कृषि वैज्ञानिकों, उद्योग, नागरिक समाज और उपभोक्ताओं आदि सभी की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसका अर्थ है कि ये सभी इकाइयां मिलकर काम करें, नीति–निर्माता योजनाएं बनाएं, वैज्ञानिक अनुसंधान करें, लोगों को शिक्षा मिले कि स्वस्थ आहार कैसे सुनिश्चित करें।

यह विषय एक आह्वान है–हम सभी से कि हमें मिलकर काम करना है, साझा जिम्मेदारियां उठानी हैं, ताकि आने वाले कल में कोई भूखा न सोए, कोई पौष्टिक आहार से वंचित न हो। विश्व खाद्य दिवस हमें याद दिलाता है कि हमारा आहार सिर्फ पेट भरने का साधन ही नहीं है, बल्कि जीवन का मूलाधार भी है। बेहतर आहार और बेहतर भविष्य के लिए हाथ में हाथ यहीं रास्ता है।

अनुराधा

(अनुराधा अग्रवाल)

मानव स्वास्थ्य में लाभकारी गेहूं घास

आरती कुमारी, शशांक शेखर सोलंकी, अनुपम आदर्श, सीमा और **रमेश कुमार शर्मा**

"आज की भागदौड़ भरी जीवन शैली में लोग स्वास्थ्य के प्रति पहले से कहीं अधिक सजग हो गए हैं। ऐसे में सुपरफूड्स और कार्यात्मक खाद्य उत्पादों की लोकप्रियता लगातार बढ़ रही है। गेहूं घास (*ट्रिटिकम एस्टिवम* एल.) इसी श्रेणी में आता है, जिसे एक 'चमत्कारी सूक्ष्म-हरी पौध' कहा जा सकता है। गेहूं घास के रस का सेवन आजकल एक सुपरफूड ट्रेंड बन चुका है, खासकर उन लोगों के बीच जो प्राकृतिक तरीकों से स्वास्थ्य बनाए रखना चाहते हैं। यह सिर्फ एक पौधा नहीं, बल्कि एक शक्तिशाली प्राकृतिक टॉनिक है। इसमें शरीर को पोषण, विषमुक्त (डिटॉक्स) करने, रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने, रक्त की गुणवत्ता एवं पाचन में सुधार करने की अद्भुत क्षमता है। इसके साथ ही यह मधुमेह, कैंसर और मोटापा जैसे रोगों में उपयोगी सिद्ध होता है और शरीर को ऊर्जा प्रदान करता है। गेहूं घास शरीर को संतुलित करने और संपूर्ण स्वास्थ्य में सुधार लाने में सहायक है। यही कारण है कि आयुर्वेद, प्राकृतिक चिकित्सा और आधुनिक पोषण विशेषज्ञ भी इसके लाभों को स्वीकार करते हैं।"

गेहूं घास पोषक तत्वों से भरपूर सूक्ष्म-हरी पौध है। इसका नियमित सेवन स्वास्थ्य को बेहतर बनाता है। यह न केवल शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाती है, बल्कि यह पाचन तंत्र को सुदृढ़ करने, रक्त संचार को संतुलित करने और कोशिकीय स्वास्थ्य में भी सहायक है।

औषधीय लाभ

गेहूं घास में मौजूद क्लोरोफिल को 'हरित रक्त' कहा जाता है, क्योंकि इसकी संरचना हमारे रक्त से काफी हद तक मेल खाते हैं। इसके क्षारीय गुण शरीर में रक्त की अम्लता को संतुलित कर समग्र स्वास्थ्य को बेहतर बनाते हैं। इसके प्रमुख औषधीय लाभ हैं:

- कैंसर प्रतिरोधक प्रभाव
- सूजनरोधी और मधुमेह नियंत्रण में सहायक
- पाचन सुधारक
- प्रतिरक्षा तंत्र को सशक्त करना
- हृदय स्वास्थ्य में लाभकारी
- शरीर को विषमुक्त करने में सहायक
- त्वचा और बालों के स्वास्थ्य में सुधार
- शरीर में ऊर्जा और ताजगी का संचार

इनके अलावा गेहूं घास में उपस्थित एंटीऑक्सीडेंट्स जैसे-फ्लेवेनोइड्स भी शरीर

गुणों से भरपूर

गेहूं घास, गेहूं पौधे के कोमल, 15 दिनों से कम उम्र के अंकुर होते हैं। इसका सेवन आमतौर पर जूस या पाउडर के रूप में किया जाता है। इसमें अनेक महत्वपूर्ण पोषक तत्व एवं औषधीय गुण पाए जाते हैं। इसके प्रमुख घटक निम्न हैं:

- **विटामिन** 'ए', 'ई', 'सी' एवं 'बी' कॉम्प्लेक्स
- **मिनरल्स** आयरन, कैल्शियम, मैग्नीशियम, जिंक
- एंटीऑक्सीडेंट्स, क्लोरोफिल, फ्लेवोनॉयड्स, फेनोलिक यौगिक
- **अमीनो अम्ल एवं एंजाइम्स:** एमाइलेज, लिपेज और प्रोटेज
- गेहूं घास के 100 ग्राम रस में ऊर्जा-21 के कैलोरी, प्रोटीन -1.95 ग्राम, कार्बोहाइड्रेट-2 ग्राम, विटामिन 'ए' 427 आई.यू, विटामिन 'सी' 3.65 मि.ग्रा., विटामिन 'ई'-15.2 आई.यू, आयरन 0.61 मि.ग्रा., कैल्शियम-24.2 मि.ग्रा., मैग्नीशियम 24 मि.ग्रा., पोटेशियम-147 मि.ग्रा. जैसे तत्व पाये जाते हैं।

नालंदा उद्यान महाविद्यालय, नूरसराय, नालन्दा (बिहार), बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर (बिहार)

में फ्री रेडिकल्स को निष्क्रिय कर कोशिकीय स्तर पर सुरक्षा प्रदान करते हैं। इसमें मौजूद अमीनो अम्ल, शरीर की ऊतक वृद्धि में सहायता करते हैं। वहीं एंजाइम्स, पाचन में सहायता करते हैं।

गेहूं घास का वैज्ञानिक विधि से उत्पादन

गेहूं घास को घर पर ही आसानी से उगाया जा सकता है। इसके लिए गेहूं के बीजों को लगभग 12 घंटे पानी में भिगोकर गीले कपड़े में बांधकर अंकुरित किया जाता है। अंकुरित बीजों को ट्रे या गमले में मिट्टी या कोकोपीट में बोया जाता है और छायादार स्थान पर रखा जाता है। इसके उपरांत 12-15 दिनों में 18-22 सें.मी. लंबी पत्तियां तैयार हो जाती हैं। इनका उपयोग स्वास्थ्यवर्धक पेय या अन्य रूप में किया जा सकता है। ध्यान रखें कि पोषण की गुणवत्ता में कमी आने की वजह से 15 दिनों के बाद इनके कटाई नहीं की जानी चाहिए।

उपयोग के विविध रूप

गेहूं घास का सेवन कई रूपों में किया जा सकता है, जो इसे प्रत्येक वर्ग के लिए उपयुक्त बनाता है।

- **ताजा रसः** यह सबसे प्रभावशाली रूप माना जाता है। इसमें एंजाइम और क्लोरोफिल भरपूर मात्रा में होते हैं। इसे रोज सुबह खाली पेट लिया जा सकता है।

खेती की प्रक्रिया

बीज भिगोना

गेहूं के बीजों को 8-12 घंटे पानी में भिगो दें, ताकि अंकुरण शुरू हो सके।

बीज बिछाना

भीगे हुए बीजों को कोकोपीट पर समान रूप से फैलाएं। हल्के से दबाएं लेकिन मिट्टी से ढके नहीं।

अंकुरण के लिए ढकना

ट्रे को 2 दिनों के लिए ढक दें, ताकि बीज अंधेरे में अंकुरित हो सकें।

पानी छिड़कना

नियमित समय पर बोतल से हल्का पानी छिड़कें, ताकि नमी बनी रहे।

प्रकाश देना

2 दिनों बाद ट्रे को खोलें और उसे हल्की धूप वाली जगह पर रखें। रोज हल्की फुहार के रूप में पानी छिड़कते रहें।

कटाई

6-8 दिनों में गेहूं घास की लंबाई 6-8 इंच हो जाएगी। कैंची से काटकर इसका रस निकालें या सुखाकर पाउडर के रूप में सेवन करें।

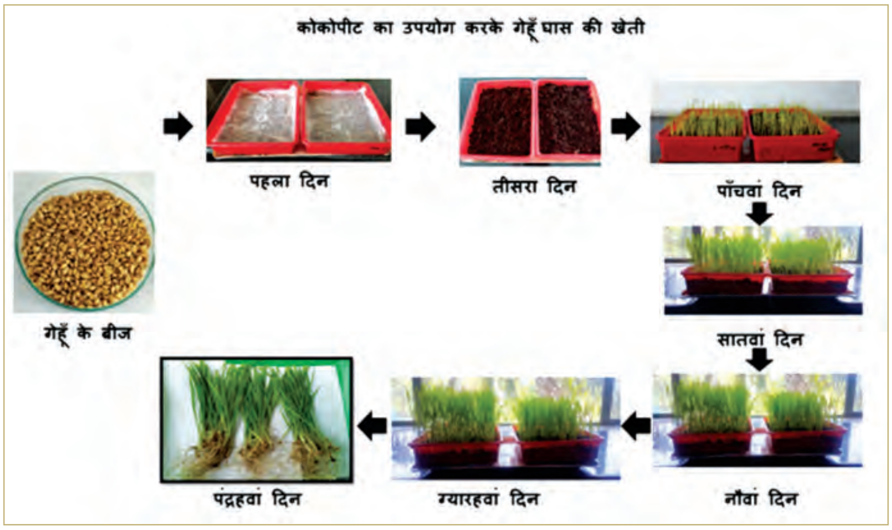

कोकोपीट का उपयोग करके गेहूं घास उत्पादन

- **पाउडरः** सूखी गेहूं घास को पीसकर बनाया गया पाउडर बेहद लाभकारी होता है। इसे पानी, जूस या स्मूदी में मिलाकर लिया जा सकता है। इसके साथ ही इसे लम्बे समय तक उपयोग भी किया जा सकता है।
- **टैबलेट/कैप्सूलः** यह पोषण प्राप्त करने का एक सुविधाजनक तरीका है। विशेषकर उन लोगों के लिए जो गेहूं घास के स्वाद को पसंद नहीं करते हैं।
- **जमाया हुआ (फ्रोजन) रसः** ताजे रस को जमाकर लंबे समय तक रखा जा सकता है। इससे पोषक तत्व सुरक्षित रहते हैं।
- **अंकुर और सलादः** रॉ फूड डाइट में गेहूं-धान का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। यह फाइबर और पोषण दोनों प्रदान करता है।
- **त्वचा पर उपयोगः** क्रीम, स्प्रे और लोशन के रूप में इसका उपयोग त्वचा की सूजन, संक्रमण और मुंहासों के उपचार में किया जाता है।

उद्यमिता का नया आयाम

गेहूं घास का उत्पादन किसानों के लिए एक कम लागत और अधिक लाभ वाला विकल्प बनकर उभर रहा है। यह न केवल स्वास्थ्य के क्षेत्र में लोकप्रिय है, बल्कि इसके उत्पादों की मांग भी लगातार बढ़ रही है।

शुरुआती स्तर पर किसानों को स्थानीय मांग और प्रतिस्पर्धा का अध्ययन करना चाहिए। मिट्टी या हाइड्रोपोनिक विधि में से किसी एक को अपनाकर उत्पादन किया जा सकता है। बेहतर परिणाम हेतु उचित ब्रांडिंग और प्रचार करें एवं वितरण के लिए योग केंद्र, हेल्थ स्टोर और ऑनलाइन चैनल से जुड़ें। इसके अलावा, खाद्य उत्पादों के लिए एफएसएसएआईआई रजिस्ट्रेशन करवाएं।

सूक्ष्म-हरी पौध

सूक्ष्म-हरी पौध वे कोमल, पोषण से भरपूर पौधे होते हैं, जिन्हें बीजांकुर अवस्था के बाद की वास्तविक पत्तियों के निकलने पर काटा जाता है। इनमें उच्च मात्रा में विटामिन एवं मिनरल, शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट, प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। साथ ही, इनका स्वाद, रंग और सुगंध व्यंजन में विशेष आकर्षण प्रदान करते हैं। ये पौधे न केवल व्यंजन की शोभा बढ़ाते हैं, बल्कि स्वास्थ्य को भी नए आयाम प्रदान करते हैं।

लाभ

- कम निवेश के साथ थोड़ी सी जगह, सस्ते बीज और सामान्य उपकरणों से आसानी से शुरुआत की जा सकती है।
- शीघ्र उत्पादन। 7-10 दिनों में फसल तैयार हो जाती है।
- बाजार में मांग। जूस कॉर्नर, योग केंद्र, हेल्थ ड्रिंक स्टॉल और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर इसकी भारी मांग है।
- विविध उत्पाद के रूप में रस, पाउडर, कैप्सूल और त्वचा उत्पादों में गेहूं घास का उपयोग होता है।

भविष्य में गेहूं घास के औषधीय गुणों पर और अधिक अनुसंधान की आवश्यकता है, जिससे स्वास्थ्य क्षेत्र में इसके योगदान को और वैज्ञानिक रूप से समझा जा सके। गेहूं घास प्रकृति का एक सरल, लेकिन प्रभावशाली उपहार है। ■

फसल अवशेषों का बाह्य-स्थल प्रबंधन

प्रदीप कुमार, अर्डिथ शंकर, स्वीटी कुमारी, सौरभ कुमार और **अभिनव कुमार सिंह**

"भारत जैसे कृषि प्रधान देश में फसल अवशेषों का उत्पादन निरंतर बढ़ रहा है। यदि इन्हें उचित रूप से प्रबंधित न किया गया, तो पर्यावरण, मृदा और मानव स्वास्थ्य के लिए गंभीर संकट बन सकता है। परंपरागत रूप से अपनाई गई फसल अवशेष जलाने की पद्धति से वायु प्रदूषण, ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन और मृदा जैविक गुणों में कमी देखी गई है। इस संदर्भ में, फसल अवशेषों का बाह्य-स्थल प्रबंधन एक टिकाऊ और पर्यावरणीय दृष्टि से अनुकूल विकल्प के रूप में उभरकर सामने आया है। बाह्य-स्थल प्रबंधन के अंतर्गत, खेत में छोड़े गए अवशेषों को संग्रहित कर उन्हें बायोएनर्जी, बायोचार, कम्पोस्ट, चारा, मशरूम उत्पादन और औद्योगिक उपयोग हेतु संसाधित किया जाता है। यह न केवल वायु प्रदूषण को कम करता है, बल्कि ग्रामीण आजीविका, ऊर्जा सुरक्षा और मृदा पोषण चक्र को भी सुदृढ़ बनाता है।"

भारत, विश्व में धान और गेहूं का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। इसके परिणामस्वरूप यहां बड़ी मात्रा में कृषि अपशिष्ट उत्पन्न होता है। देश के अधिकांश राज्यों, विशेष रूप से उत्तर भारत के गुजरात, महाराष्ट्र, हरियाणा, राजस्थान, पंजाब और उत्तर प्रदेश में, धान, गेहूं और मक्का प्रमुख खाद्य फसलें हैं।

धान की कटाई में मशीनीकरण के कारण खेतों में 8-10 इंच लंबा डंठल शेष रह जाता है, जिसे किसान अक्सर जला देते हैं। कुछ राज्यों में कटाई के बाद अत्यधिक मात्रा में फसल अवशेष बचते हैं, जिन्हें व्यापक स्तर पर जला दिया जाता है। उत्तर भारत में प्रत्येक एकड़ धान की फसल से औसतन 2.5 टन पराली निकलती है। हालांकि, कुछ क्षेत्रों में इन अवशेषों का उपयोग बायोचार निर्माण, पशु आहार, जैव ईंधन उत्पादन, मशरूम की खेती और ऊर्जा उत्पादन जैसे स्थायी विकल्पों में किया जा रहा है।

सहायक प्राध्यापक, सह कनीय वैज्ञानिक, वीर कुंवर सिंह कृषि महाविद्यालय, डुमराव, बक्सर

अवशेष जलाने से पार्टिकुलेट मैटर (जैसे-पीएम 2.5) की मात्रा में हानिकारक वृद्धि होती है। इसके साथ ही सल्फर डाइऑक्साइड, वाष्पशील कार्बनिक यौगिक, नाइट्रोजन ऑक्साइड और कार्बन मोनोऑक्साइड का उत्सर्जन भी बढ़ता है। इससे वायुमंडलीय गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन प्रदूषकों के कारण जन स्वास्थ्य पर गंभीर समस्या उत्पन्न होती है। इसके साथ ही सामाजिक और आर्थिक नुकसान भी होते हैं।

अनुमान के अनुसार पराली जलाने से होने वाले कुल उत्सर्जन में लगभग 62 प्रतिशत हिस्सा धान और गेहूं की फसलों से तथा 20 प्रतिशत हिस्सा गन्ने के अवशेषों से आता है। इस प्रकार, खुले खेतों में पराली जलाने की परंपरा न केवल पर्यावरणीय और स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं उत्पन्न करती है, बल्कि किसानों को आर्थिक दृष्टि से भी नुकसान पहुंचाती है। इसके विपरीत, यदि फसल अवशेषों का समुचित एवं लाभकारी उपयोग किया जाए, तो इससे किसानों की आय में भी वृद्धि संभव है।

टिकाऊ कृषि हेतु अवशेष प्रबंधन

वैश्विक खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए कृषि पद्धतियों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, किन्तु इनके साथ-साथ बड़ी मात्रा में फसल अवशेषों का उत्पादन भी होता है। यदि इन अवशेषों का समुचित प्रबंधन नहीं किया जाए, तो यह मृदाक्षरण, वायु एवं जल प्रदूषण तथा ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन जैसी पर्यावरणीय समस्याओं का कारण बन सकते हैं।

बाह्य-स्थल प्रबंधन पद्धति एक प्रमुख रणनीति के रूप में उभर कर सामने आयी है। इसमें अवशेषों को खेत से बाहर एकत्र कर उनका परिवहन, प्रसंस्करण और उपयोग किया जाता है। यह विधि पारंपरिक फसल अवशेष जलाने की तुलना में एक पर्यावरण-सम्मत और दीर्घकालिक अनुकूल विकल्प है। फसल अवशेष, जैसे-पुआल, पराली, डंठल और अन्य बचे हुए हिस्से, कटाई के उपरांत खेतों में छोड़े गए कृषि उपोत्पादों का महत्वपूर्ण भाग होते हैं। अनेक क्षेत्रों में इन अवशेषों को परंपरागत रूप से खेतों में ही जलाने से प्रदूषण, मृदा में मौजूद पोषक तत्वों की क्षति, मृदा में लाभकारी सूक्ष्मजीवों एवं कीटों का विनाश तथा जलवायु परिवर्तन की प्रक्रिया में तेजी आना शामिल हैं।

बाह्य-स्थल प्रबंधन के अंतर्गत फसल अवशेषों को खेत से बाहर ले जाकर उन्हें

मूल्यवान संसाधनों में परिवर्तित किया जाता है। इस संदर्भ में विभिन्न बाह्य-स्थल प्रबंधन उपायों का विश्लेषण किया गया है। इनमें विशेष रूप से उनके पर्यावरणीय संरक्षण और आर्थिक लाभों पर ध्यान केंद्रित किया गया है।

बाह्य-स्थल प्रबंधन तकनीकें

कम्पोस्टिंग

कम्पोस्टिंग फसल अवशेष प्रबंधन की सर्वाधिक पर्यावरण-संवेदनशील और टिकाऊ विधियों में से एक मानी जाती है। इस प्रक्रिया में जैविक अवशेषों का नियंत्रित परिस्थितियों में सूक्ष्मजीवों द्वारा अपघटन होता है। इसके परिणामस्वरूप पोषक तत्वों से समृद्ध एक गुणवत्तापूर्ण जैविक उर्वरक प्राप्त होता है। यह न केवल अवशेषों का प्रभावी पुनर्चक्रण सुनिश्चित करता है, बल्कि मृदा स्वास्थ्य को सुदृढ़ करने, उसमें कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ाने, जलधारण क्षमता में सुधार लाने तथा रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता को कम करने में भी सहायक होता है।

आधुनिक विधि से फसल अवशेषों का प्रबंधन

धान के पुआल और गेहूं के डंठलों जैसे-फसल अवशेषों की व्यापक स्तर पर कम्पोस्टिंग कम्पोस्ट गड्ढों या औद्योगिक कम्पोस्टिंग इकाइयों के माध्यम से की जा सकती है। कम्पोस्ट तैयार करने की पारंपरिक प्रक्रिया में, अवशेषों को प्रारंभ में पशु बिछावन के रूप में उपयोग किया जाता है। इससे प्रत्येक कि.ग्रा. पुआल लगभग 2-3 कि.ग्रा. नाइट्रोजनयुक्त मूत्र को अवशोषित कर लेता है। इसके उपरांत, इन अवशेषों को गड्ढों में एकत्र कर कम्पोस्टिंग की जाती है। इस विधि से निर्मित कम्पोस्ट में औसतन 1.5 प्रतिशत नाइट्रोजन, 2.5 प्रतिशत फॉस्फोरस एवं 2.5 प्रतिशत पोटाश पाया जाता है।

लाभ

- मृदा की उर्वराशक्ति में वृद्धि।
- रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता में कमी।
- जलधारण क्षमता में सुधार।
- दीर्घकालिक कार्बन स्थिरीकरण को प्रोत्साहन।

चुनौतियां

- अवशेषों के एकत्रीकरण एवं परिवहन हेतु आधारभूत संरचना की आवश्यकता।
- कम्पोस्टिंग प्रक्रिया के लिए उपयुक्त पर्यावरणीय स्थितियों का प्रबंधन।
- यह एक श्रम-सघन प्रक्रिया है, जिससे

ग्रीन माइक्रोफाइनेंस

फसल अवशेष जलाना (क्रॉप रेजिड्यू बर्निंग सीआरबी) वायुमंडल में सूक्ष्म कणों की मात्रा को बढ़ाता है। इससे विशेष रूप से उत्तर भारत के राज्यों-पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और दिल्ली में परिवेशीय वायु गुणवत्ता पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। उत्तर-पश्चिमी हवाओं के चलते पराली से उत्पन्न धुआं इन क्षेत्रों में फैलता है और नागरिकों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। प्रत्येक वर्ष अक्टूबर और नवंबर में यह समस्या चरम पर होती है। यह समस्या केवल स्वास्थ्य तक सीमित नहीं है, बल्कि यह पर्यावरणीय क्षरण, मृदा की गुणवत्ता में कमी और सामाजिक-आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न करती है। इससे मृदा की संरचना, जैविक तत्व, छिद्रता और सूक्ष्मजीवों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। साथ ही मृदा की उर्वराशक्ति भी कमजोर होती है। इससे उत्पादन क्षमता कम होती है और कृषि मूल्य संवर्धन में कमी आती है। सीआरबी के कारण ऊष्मा उप-मृदा तापमान को 33.8 डिग्री सेल्सियस से 42.2 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ा सकती है।

बायोमास के जलने से वायुमंडल में वाष्पशील कार्बनिक यौगिक और नाइट्रोजन ऑक्साइड्स निकलते हैं, जो सौर विकिरण की उपस्थिति में भूस्तरीय ओजोन का निर्माण करते हैं। यह ओजोन फसल चयापचय को प्रभावित करता है, जिससे गेहूं, सोयाबीन और धान की उत्पादकता घटती है।

पिछले पांच वर्षों में सीआरबी से भारत को लगभग 1.5 बिलियन डॉलर का अनुमानित आर्थिक नुकसान हुआ है। कृषि उत्पादकता में कमी के साथ प्रति व्यक्ति आय पर भी प्रभाव पड़ा है।

इस समस्या के समाधान हेतु सरकार ने ग्रीन माइक्रोफाइनेंस को बढ़ावा दिया है। इसके अंतर्गत किसानों और समुदायों को माइक्रो-क्रेडिट, बीमा और भुगतान सेवाएं दी जाती हैं। हालांकि, किसानों में अब भी इन सेवाओं को अपनाने की झिझक है। इसे ध्यान में रखते हुए 'प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण' के माध्यम से अवशेष न जलाने पर प्रोत्साहन राशि देने की पहल की गई है। इस विचारधारा के अंतर्गत, जो किसान पर्यावरणीय सेवाएं प्रदान करते हैं, उन्हें वित्तीय सहायता द्वारा पुरस्कृत किया जाना चाहिए। वैश्विक स्तर पर इस प्रकार की 300 से अधिक योजनाएं सक्रिय हैं। यह उपाय पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ किसानों की आय वृद्धि में भी सहायक है। सरकार बाह्य-स्थल फसल अवशेष प्रबंधन को बढ़ावा देने हेतु किसान समितियों, सहकारी समितियों और स्वयं सहायता समूहों को कृषि मशीनरी बैंक की स्थापना में वित्तीय सहायता प्रदान कर रही है।

समय और संसाधनों की अधिक आवश्यकता होती है।

जैव ऊर्जा उत्पादन

फसल अवशेषों से जैव ऊर्जा उत्पादन की प्रौद्योगिकियां नवीकरणीय ऊर्जा के क्षेत्र में एक व्यवहार्य विकल्प के रूप में उभरी हैं। एनारोबिक डाइजेशन (विषमपोषी अपघटन) जैसी प्रक्रियाओं द्वारा इन अवशेषों को बायोगैस अथवा बायोएथेनॉल में रूपांतरित किया जा सकता है। इसका उपयोग विद्युत उत्पादन तथा पारंपरिक जीवाश्म ईंधनों के विकल्प के रूप में किया जा सकता है। धान की भूसी, मक्का डंठल और गन्ने की खोई जैसे कृषि अवशेष इस उद्देश्य के लिए उपयुक्त कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त होते हैं।

लाभ

- जीवाश्म ईंधनों पर निर्भरता को कम करता है।
- ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी लाता है।
- किसानों के लिए वैकल्पिक आय के स्रोत उत्पन्न करता है।

चुनौतियां

- प्रारंभिक चरण में पूंजीगत निवेश की आवश्यकता होती है।
- प्रौद्योगिकी दक्षता को बढ़ाने हेतु निरंतर अनुसंधान एवं विकास आवश्यक होता है।
- अवशेषों के संग्रहण, परिवहन और प्रसंस्करण हेतु प्रभावी लॉजिस्टिक व्यवस्थाओं की आवश्यकता होती है।

बायोचार उत्पादन

बायोचार एक उच्च कार्बनयुक्त पदार्थ है। इसे जैविक बायोमास (जैसे फसल अवशेष) को सीमित ऑक्सीजन की स्थिति में धीमी गति से गर्म करने की प्रक्रिया (पायरोलिसिस) के माध्यम से प्राप्त किया जाता है। यह महीन कणों वाला चारकोल होता है, जिसे मृदा में मिलाकर दीर्घकालिक कार्बन भंडारण सुनिश्चित किया जा सकता है। बायोचार मृदा में कार्बन पृथक्करण को बढ़ावा देता है और एक प्रभावी मृदा सुधारक के रूप में कार्य करता है। इससे मृदा की भौतिक एवं रासायनिक संरचना में सकारात्मक परिवर्तन होते हैं।

लाभ

- मृदा स्वास्थ्य में सुधार करता है।
- मृदा की अम्लता को कम करता है।
- जलधारण क्षमता एवं पोषक तत्वों को संचित रखने की क्षमता को बढ़ाता है।
- ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में उल्लेखनीय कमी लाता है।

चुनौतियां

- इसमें वाष्पशील जैविक यौगिक उपस्थित हो सकते हैं, जो यदि उचित ढंग से प्रबंधित न किए जाएं, तो मानव स्वास्थ्य के लिए संभावित जोखिम उत्पन्न कर सकते हैं।

पशु आहार में फसल अवशेषों का उपयोग

फसल अवशेष पशुधन क्षेत्र के लिए एक मूल्यवान संसाधन के रूप में कार्य करते हैं। गेहूं का पुआल, मक्का के डंठल और गन्ने के शीर्ष जैसे अवशेषों का उपयोग प्रायः चारे के रूप में किया जाता है। यद्यपि इन अवशेषों की स्वाभाविक पोषण गुणवत्ता अपेक्षाकृत कम होती है, किन्तु इन्हें अमोनीकरण अथवा किण्वन जैसी तकनीकों द्वारा उपचारित कर इनकी पाचन क्षमता और पोषक मूल्य में उल्लेखनीय सुधार किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, पशुओं की संपूर्ण पोषण आवश्यकताओं को संतुलित करने हेतु हरी दलहनी फसलों के अवशेषों को भी सम्मिलित किया जाता है।

लाभ

- कृषि अपशिष्ट को उपयोगी पशु आहार में रूपांतरित करता है
- समग्र खाद्य उत्पादन श्रृंखला का समर्थन करता है
- व्यावसायिक चारे पर होने वाले व्यय को कम करता है
- टिकाऊ, चक्रीय कृषि प्रणाली को प्रोत्साहित करता है।

चुनौतियां

- फसल अवशेषों की पोषण गुणवत्ता बढ़ाने के लिए पूर्व-उपचार की आवश्यकता हो सकती है
- चारे को प्रसंस्करण इकाइयों या पशुपालकों तक पहुंचाने के लिए परिवहन और भंडारण लागत अपेक्षाकृत अधिक हो सकती है।

औद्योगिक उपयोग (कागज एवं जैविक पैकेजिंग सामग्री)

कुछ प्रमुख फसल अवशेष, जैसे-गन्ने की खोई, धान की भूसी और गेहूं का पुआल, औद्योगिक क्षेत्र में मूल्यवर्धित उत्पादों के निर्माण हेतु उपयोग किए जा सकते हैं। इनका प्रयोग कागज निर्माण तथा बायोडिग्रेडेबल (जैव अपघटनीय) पैकेजिंग सामग्री के रूप में किया जा सकता है, जो पर्यावरण के अनुकूल विकल्प प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त, बायोचार जैसे उत्पाद कार्बन पृथक्करण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह कार्बन को दीर्घकालिक रूप से मृदा में स्थिर रखता है।

चुनौतियां

- औद्योगिक स्तर पर उत्पादन हेतु उन्नत एवं परिष्कृत तकनीकी समाधान की आवश्यकता होती है।
- इन उत्पादों के लिए पर्याप्त और स्थायी बाजार मांग का होना आवश्यक है।
- परियोजना की आर्थिक व्यवहार्यता उसके उत्पादन स्तर एवं संचालन क्षमता पर निर्भर करती है।

मशरूम उत्पादन में फसल अवशेषों का उपयोग

मशरूम की खेती फसल अवशेषों के प्रबंधन का एक नवोन्मेषी एवं लाभकारी तरीका है। धान और गेहूं का पुआल, मक्का का भुट्टा आदि अवशेष ऑयस्टर एवं बटन जैसे मशरूम की प्रजातियों के लिए उत्कृष्ट माध्यम के रूप में प्रयुक्त होते हैं। मशरूम की कटाई के उपरांत, उपयोग किए गए अवशेषों को जैविक कम्पोस्ट के रूप में पुनः प्रयोग में लाया जा सकता है। इससे यह प्रक्रिया एक सतत और चक्रीय कृषि प्रणाली का हिस्सा बन जाती है।

लाभ

- किसानों के लिए वैकल्पिक आय का स्रोत प्रदान करता है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगार और आजीविका के अवसरों को बढ़ाता है।
- फसल अवशेषों के प्रभावी और मूल्यवर्धित उपयोग को प्रोत्साहित करता है।

चुनौतियां

- मशरूम उत्पादन हेतु आवश्यक प्रशिक्षण, तकनीकी जानकारी और कौशल की आवश्यकता होती है।
- इसके साथ ही तापमान और आर्द्रता जैसी पर्यावरणीय परिस्थितियों का सटीक नियंत्रण एवं प्रबंधन आवश्यक होता है।

पर्यावरणीय एवं आर्थिक दृष्टिकोण से बाह्य-स्थल फसल अवशेष प्रबंधन

बाह्य-स्थल फसल अवशेष प्रबंधन से अनेक पर्यावरणीय लाभ प्राप्त होते हैं। जैसे-अवशेष जलाने से उत्पन्न वायु प्रदूषण में कमी, मृदा में कार्बन पृथक्करण की प्रक्रिया को प्रोत्साहन तथा पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण आदि। आर्थिक रूप से यह प्रणाली किसानों के लिए कम्पोस्ट, जैव ईंधन, बायोगैस, बायोचार अथवा औद्योगिक उत्पादों के माध्यम से अतिरिक्त आय अर्जित करने का अवसर भी प्रदान करती है। बाह्य-स्थल प्रबंधन की प्रभावशीलता निम्न प्रमुख कारकों पर निर्भर करती हैं:

- फसल अवशेषों के संग्रहण एवं परिवहन हेतु आवश्यक भौतिक अवसंरचना की उपलब्धता।
- किसानों को टिकाऊ प्रथाओं को अपनाने हेतु पर्याप्त आर्थिक प्रोत्साहन।
- ऐसी सरकारी नीतियों का निर्माण, जो जैव ऊर्जा परियोजनाओं के लिए सब्सिडी या बायोचार निर्माण हेतु कार्बन क्रेडिट जैसे उपायों से स्थायी अवशेष प्रबंधन को प्रोत्साहित करें।
- तकनीकी नवाचार, जो इन प्रक्रियाओं को अधिक सुगम, किफायती एवं व्यावसायिक दृष्टि से व्यवहार्य बनाएं।

फसल अवशेषों से बने बायोमास पेलेट्स

सतत कृषि की दिशा में बाह्य-स्थल प्रबंधन

- फसल अवशेषों का बाह्य-स्थल प्रबंधन कृषि अपशिष्ट की बढ़ती समस्या का एक दीर्घकालिक और पर्यावरण-संवेदनशील समाधान प्रस्तुत करता है।
- हानिकारक प्रथाओं जैसे फसल अवशेष को जलाना छोड़कर, इन संसाधनों को कम्पोस्ट, ऊर्जा या औद्योगिक उत्पादों में रूपांतरित किया जा सकता है।
- इससे न केवल पर्यावरणीय प्रभाव में कमी आती है, बल्कि किसानों की आय और आजीविका को भी सशक्त किया जा सकता है।

आधुनिक कृषि प्रणालियों में टिकाऊ फसल अवशेष प्रबंधन को अपनाना न केवल पर्यावरणीय संरक्षण हेतु आवश्यक है, बल्कि यह कृषकों के लिए आर्थिक रूप से लाभकारी भी सिद्ध हो सकता है।

लाभ

- कागज और पैकेजिंग जैसे उद्योगों के लिए कच्चे माल के रूप में वनों पर निर्भरता को कम करता है।
- पारंपरिक सिंथेटिक पैकेजिंग विकल्पों के स्थान पर टिकाऊ विकल्प प्रदान करता है।
- जलवायु परिवर्तन शमन में सकारात्मक योगदान देता है।

फसल अवशेष प्रबंधन का महत्व

फसल अवशेष कृषि प्रणाली में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यदि इन्हें खेत में ही उचित तरीके से प्रबंधित किया जाए-जैसे मल्चिंग या मृदा में समावेशन, तो ये मृदा की संरचना को बेहतर बनाते हैं। इसमें जैविक कार्बन की मात्रा को बढ़ाते हैं और मृदा अपरदन को कम करते हैं। इसके विपरीत, फसल अवशेषों का अनुचित प्रबंधन, विशेषकर उनको जलाना, गंभीर पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न करता है। कृषि यांत्रिकीकरण और फसल उत्पादन की तीव्रता में वृद्धि के कारण फसल अवशेषों की मात्रा में भी उल्लेखनीय बढ़ोतरी हुई है, जिससे इनके प्रभावी और स्थायी निपटान की आवश्यकता बढ़ गई है। खेत में छोड़े गए अवशेष कीटों और रोगों के लिए आश्रय स्थल बन सकते हैं। इससे अगली फसल की उत्पादकता प्रभावित हो सकती है। ऐसे परिप्रेक्ष्य में, बाह्य-स्थल तकनीकों सहित वैज्ञानिक और टिकाऊ अवशेष प्रबंधन नीतियां अपनाना आवश्यक है, ताकि:

- कृषि जनित पर्यावरणीय प्रभावों को न्यूनतम किया जा सके।
- मृदा के पोषक तत्वों का संरक्षण सुनिश्चित किया जा सके और मृदा क्षरण रोका जा सके
- अवशेष जलाने से उत्पन्न वायु प्रदूषण को नियंत्रित किया जा सके।
- फसल अवशेषों को आर्थिक रूप से उपयोगी उत्पादों में परिवर्तित किया जा सके।

निवेदन

लेखक बंधु *खेती* पत्रिका के लिए अपने लेख और संबंधित फोटो, कवरिंग लैटर के साथ सिर्फ निम्न पोर्टल पर ही अपने मोबाइल नम्बर के साथ भेजें। ध्यान रखें कि फोटो जेपीजे फॉर्मेट में और उच्च रेज्योल्यूशन की हों। लेख में अधिकतम 1200 शब्दों की संख्या रखने का प्रयास करें। इसके अतिरिक्त सुझाव और प्रतिक्रियाएं भी भेज सकते हैं।

हमारा पोर्टल है :
epatrika.icar.org.in

–संपादक

शूकर पालन से बढ़ाएं आमदनी

विक्रमजीत सिंह, अशोक चौधरी, सुरेश चंद कांटवा और **गुलाब चौधरी**

"व्यावसायिक शूकर पालन वैश्विक कृषि क्षेत्र का एक आवश्यक स्तंभ है। यह दुनियाभर में सबसे अधिक खपत किए जाने वाले मांस यानी पोर्क की आपूर्ति करता है। चूंकि पशु प्रोटीन की मांग लगातार बढ़ रही है, इसलिए व्यावसायिक शूकर पालन में आर्थिक अवसर और चुनौतियां दोनों शामिल हैं। इस लेख में व्यावसायिक शूकर पालन की मूल जानकारी, इसके लाभ, चुनौतियां और भविष्य के रुझानों का विश्लेषण किया गया है। व्यावसायिक शूकर पालन मांस उत्पादन के उद्देश्य से शूकरों के बड़े पैमाने पर, व्यवस्थित उत्पादन को संदर्भित करता है। पारंपरिक या छोटे पैमाने पर शूकर पालन के विपरीत, व्यावसायिक संचालन में उच्च उत्पादन मात्रा, उन्नत तकनीकों का उपयोग और दक्षता पर जोर दिया जाता है। ये फार्म आमतौर पर मशीनीकृत होते हैं। उत्पादकता को अधिकतम करने और उपभोक्ता मांग को पूरा करने के लिए नियंत्रित वातावरण में शूकरों को पालने के लिए तैयार किया जाता है।"

पोर्क प्रोटीन का एक महत्वपूर्ण स्रोत है, जो किसान और देश दोनों के लिए शूकर पालन को एक आकर्षक व्यवसाय बनाता है। वैश्विक खाद्य श्रृंखला में इसका योगदान भी अत्यधिक है। इसमें चीन, संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी और स्पेन जैसे देश प्रमुख पोर्क उत्पादक के रूप में अग्रणी हैं।

कृषि विज्ञान केंद्र, हनुमानगढ़-II (नोहर), राजस्थान पशुचिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)

व्यावसायिक शूकर पालन में मुख्य कदम

प्रजनन

किसी भी शूकर पालन कार्य में पहला कदम उच्च गुणवत्ता वाले प्रजनन स्टॉक का चयन करना है। यह प्रजनन फार्म की सफलता के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। स्वस्थ और आनुवंशिक रूप से श्रेष्ठ शूकर बेहतर संतान उत्पन्न करते हैं। किसान आमतौर पर विकास दर, रोग प्रतिरोधक क्षमता और मांस की गुणवत्ता जैसे कारकों के आधार पर शूकरों का चयन करते हैं। कृत्रिम गर्भाधान का उपयोग आमतौर पर व्यावसायिक शूकर पालन में किया जाता है, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि सर्वोत्तम आनुवंशिक लक्षण आगे बढ़ सकें।

गर्भधारण और प्रसव

एक बार जब मादा शूकर गर्भवती हो जाती है, तो वह लगभग 3 महीने, 3 सप्ताह और 3 दिनों (लगभग 114 दिनों) की गर्भधारण अवधि से गुजरती है। इस दौरान, स्वस्थ शूकरों के लिए उचित पोषण, देखभाल और तनावमुक्त वातावरण आवश्यक है। जन्म देने के बाद, मादा शूकर प्रसव के चरण में

प्रवेश करती हैं, जहां वे कई हफ्तों तक नवजातों को पालती हैं। व्यावसायिक संचालन में, शूकर और नवजातों की सुरक्षा और आराम सुनिश्चित करने के लिए अक्सर फरोइंग क्रेट का उपयोग किया जाता है।

पालन और फिनिशिंग

शावकों को उनकी माताओं से अलग करने के बाद (आमतौर पर लगभग 3-4 सप्ताह) उन्हें नर्सरी बार्न में ले जाया जाता है। यहां उनके स्वस्थ विकास को बढ़ावा देने के लिए विशेष रूप से तैयार किए गए आहार पर पाला जाता है। एक बार जब वे इष्टतम वजन तक पहुंच जाते हैं, तो उन्हें फिनिशिंग बार्न में स्थानांतरित कर दिया जाता है, जहां उन्हें वध के लिए तैयार होने तक रखा जाता है, आमतौर पर लगभग 6 महीने की उम्र में। इस स्तर पर स्वास्थ्य की निगरानी और अधिकतम विकास और मांस की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए संतुलित आहार प्रदान करना महत्वपूर्ण है।

बाजार

जब शूकर बाजार के वजन (आमतौर पर 250-300 पाउंड के बीच) तक पहुंच जाते हैं, तो उन्हें प्रसंस्करण के लिए बूचड़खानों में भेज दिया जाता है। फिर मांस को काटा जाता है, पैक किया जाता है और विभिन्न बाजारों में वितरण के लिए तैयार किया जाता है। कई व्यावसायिक शूकर फार्म इस चरण को सुव्यवस्थित करने के लिए मांस प्रसंस्करण कंपनियों के साथ साझेदारी करते हैं।

व्यावसायिक शूकर पालन के लाभ

- **उच्च उत्पादकता:** व्यावसायिक शूकर फार्म दक्षता और उत्पादन के लिए तैयार किए जाते हैं। स्वचालित आहार प्रणाली, जलवायु नियंत्रण और स्वास्थ्य निगरानी उपकरणों जैसी आधुनिक तकनीकों के उपयोग से, किसान कम समय में बड़ी संख्या में शूकरों को पाल सकते हैं। उत्पादकता का यह उच्च स्तर पोर्क की लगातार बढ़ती मांग को पूरा करने में सक्षम बनाता है।

- **आर्थिक प्रभाव:** पोर्क उत्पादन वैश्विक अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पालन से लेकर प्रसंस्करण तक लाखों रोजगार प्रदान करता है, और स्थानीय और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं में योगदान करता है। कई देशों में, शूकर पालन एक प्रमुख उद्योग है जो ग्रामीण रोजगार और आर्थिक विकास को बढ़ावा देने वाला प्रमुख उद्योग है।
- **स्थिरता और संसाधन दक्षता:** व्यावसायिक शूकर पालन में अपशिष्ट को कम करने और स्थिरता को बढ़ाने के लिए प्रौद्योगिकी और अनुकूलित प्रथाओं का उपयोग किया जाता है। अपशिष्ट पुनर्चक्रण और नवीकरणीय ऊर्जा जैसी प्रणालियों के माध्यम से कई फार्म अपने पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने का प्रयास कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त, आहार रूपांतरण अनुपात को अधिकतम करके कम संसाधनों में अधिक मांस का उत्पादन किया जा सकता है। इससे पर्यावरण और आर्थिक स्थिरता दोनों सुनिश्चित होती हैं।

चुनौतियां

व्यावसायिक शूकर पालन की संभावनाएं आशाजनक हैं, निम्न चुनौतियां भी मौजूद हैं:

- **रोग नियंत्रण:** शूकर कई तरह के रोगों के प्रति संवेदनशील होते हैं, जो फार्म में तेजी से फैल सकते हैं। अफ्रीकी स्वाइन फीवर (एएसएफ) जैसे प्रकोप वैश्विक पोर्क आपूर्ति को प्रभावित करते हैं। संगरोध प्रक्रियाओं, स्वच्छता प्रथाओं और टीकाकरण कार्यक्रमों सहित सख्त जैव सुरक्षा उपाय शूकरों के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं।
- **पर्यावरण संबंधी चिंताएं:** संधारणीय पालन में प्रगति के बावजूद, बड़े पैमाने पर शूकर पालन की अक्सर इसके पर्यावरणीय प्रभाव के लिए आलोचना की जाती है। यह अपशिष्ट प्रबंधन, जल उपयोग और कार्बन फुटप्रिंट जैसी समस्याएं उत्पन्न करता है। कई व्यावसायिक फार्म अधिक पर्यावरण-अनुकूल प्रथाओं को अपनाकर इन मुद्दों को हल करने के लिए काम कर रहे हैं।
- **पशु कल्याण:** इस उद्योग के भीतर पशु कल्याण चर्चा का एक महत्वपूर्ण विषय है। आलोचकों का तर्क है कि व्यावसायिक शूकर पालन संचालन में सीमित स्थितियां, विशेष रूप से फरोइंग और फिनिशिंग बार्न में, पशुओं के तनाव

शावकों की विशेष देखभाल

और परेशानी का कारण बन सकती हैं। जवाब में, कई फार्म अधिक मानवीय प्रथाओं की ओर बढ़ रहे हैं। इसके अंतर्गत फार्म अधिक विशाल आवास और बेहतर देखभाल प्रोटोकॉल अपनाकर पशु कल्याण सुनिश्चित कर रहे हैं।

- **बाजार में उतार-चढ़ाव:** आहार आपूर्ति शृंखला व्यवधान और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार नीतियों के कारण पोर्क की कीमतें अस्थिर हो सकती हैं। किसानों को लाभदायक बने रहने के लिए इन उतार-चढ़ावों का मूल्यांकन करना आवश्यक है। अक्सर कीमतों को स्थिर करने के लिए प्रसंस्करण संयंत्रों या सहकारी समितियों के साथ अनुबंधों पर निर्भर रहना चाहिए।

व्यावसायिक शूकर पालन में उभरते रुझान

- **तकनीकी नवाचार:** उन्नत पालन से लेकर ब्लॉकचेन ट्रैकिंग तक, तकनीक शूकर पालन उद्योग में क्रांति ला रही है। आईओटी सेंसर शूकरों के स्वास्थ्य की निगरानी करते हैं। आहार एवं जल प्रबंधन प्रणाली को स्वचालित करते हैं। फार्म प्रबंधन को अनुकूलित करने के लिए उत्पादन डेटा को ट्रैक करते हैं। ये नवाचार किसानों को सूचित निर्णय लेने, दक्षता में सुधार करने और लागत कम करने में मदद करते हैं।
- **वैकल्पिक आहार और संधारणीय अभ्यास:** आहार उत्पादन के पर्यावरणीय प्रभाव के बारे में बढ़ती चिंताओं के साथ, कीट आहार, शैवाल और खाद्य अपशिष्ट जैसे वैकल्पिक आहार स्रोतों की ओर रुझान बढ़ा है। ये विकल्प पारंपरिक आहार सामग्री पर निर्भरता को कम करने और शूकर पालन के कार्बन फुटप्रिंट को कम करने की क्षमता प्रदान करते हैं।

मादा एवं शावकों के आवास का उन्नत प्रबंधन

- **नैतिक प्रथाओं के प्रति उपभोक्ता मांग:** उपभोक्ता अपने आहार विकल्पों के लिए नैतिक प्रभावों के प्रति अधिक जागरुक रहे हैं। इस कारण मानवीय रूप से पालन किए गए और टिकाऊ स्रोतों से प्राप्त पोर्क उत्पादों की मांग बढ़ रही है। इसके परिणामस्वरूप उद्योग में पारदर्शिता बढ़ी है और कई फार्म उच्च कल्याण मानकों को पूरा करने के लिए ग्लोबल एनिमल पार्टनरशिप या एनिमल वेलफेयर अप्रूव्ड जैसे प्रमाणन संस्थानों से मान्यता प्राप्त कर रहे हैं।
- **आनुवंशिक उन्नति:** आनुवंशिकी शूकरों की उत्पादकता और स्वास्थ्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। आनुवंशिक अनुसंधान में प्रगति के साथ, किसान अब ऐसे शूकर पाल सकते हैं, जो अधिक रोग-प्रतिरोधी, तेजी से बढ़ने वाले और उच्च गुणवत्ता वाला मांस उत्पादित करते हैं। आनुवंशिक सुधारों में दक्षता बढ़ाने और एंटीबायोटिक दवाइयों और अन्य हस्तक्षेपों की आवश्यकता को कम करने की क्षमता है।

व्यावसायिक शूकर पालन एक गतिशील उद्योग है, जो वैश्विक खाद्य सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पोर्क की बढ़ती मांग के साथ, किसान लगातार अपनी पालन-पोषण प्रथाओं में निरंतर सुधार कर रहे हैं, ताकि उत्पादन टिकाऊ, कुशल और नैतिक तरीके से सुनिश्चित किया जा सके। उद्योग को रोग के प्रकोप, पर्यावरणीय दबाव और बदलती उपभोक्ता वरीयताओं के विकास जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, इसलिए नवाचार और अनुकूलन भविष्य में इसकी वृद्धि और सफलता को बनाए रखने के लिए आवश्यक होंगे। उन्नत तकनीक, नई प्रजनन विधियां और बेहतर पशु कल्याण प्रथाओं के माध्यम से, व्यावसायिक शूकर पालन का भविष्य उज्ज्वल प्रतीत होता है–बशर्ते लाभप्रदता और स्थिरता के बीच कायम रखा जाए।

■

भाकृअनुप की मासिक लोकप्रिय पत्रिका
'खेती' नवम्बर, 2025 विशेषांक के प्रमुख आकर्षण

- लवण-प्रभावित मृदा का डिजिटल मानचित्रण और मूल्यांकन
- अश्वगंधा की खेती के लिए अपशिष्ट ऊन तकनीक
- बाजरा की लवणता सहनशीलता का समाधान
- मृदा से समृद्ध भविष्य
- कट-सॉइलर तकनीक द्वारा सरसों-बाजरा की उपज में वृद्धि
- सरसों की खली के फायदें
- बारानी एवं लवणग्रस्त क्षेत्रों के लिए जलवायु-स्मार्ट पोषक फसल किनोवा
- खाद्य उत्पादन वृद्धि में सुधार विकल्पों की भूमिका
- उत्पादकता वृद्धि हेतु आर्बस्कुलर माइकोराइजा आधारित जैव पादप वृद्धि वर्धक
- सुधरी क्षारीय मृदा के लिये समेकित कृषि प्रणाली मॉडल
- लवणीय मृदा में चंदन की खेती
- प्राकृतिक वायुवीय पॉलीहाउस में लवणीय जल से सिंचित सब्जियों का टिकाऊ उत्पादन
- जलवायु चुनौतियों के खिलाफ फसलों को सशक्त बनाना
- बदलती जलवायु एवं अजैविक तनावों के अनुकूल खेती
- अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में लवणीय जलभराव वाले भू-दृश्यों के प्रबंधन

संपर्क सूत्र: प्रभारी, व्यवसाय एकक, भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, कैब-1, पूसा गेट, नई दिल्ली-110012
दूरभाष: 25843657, www.icar.org.in

कम कार्बन उत्सर्जन वाली खेती

कम कार्बन उत्सर्जन वाली खेती प्रणाली पर्यावरण के अलावा आर्थिक रूप से भी लाभकारी है। मृदा में जैविक कार्बन की वृद्धि के लिए ज्यादा वृक्षारोपण, आवरण वाली फसलें उगाना, बिना जुताई खेती करना, बेहतर चराई प्रबंधन और जैविक खाद का उपयोग करना प्रभावी उपाय है। इन तरीकों से वायुमंडलीय कार्बन का अवशोषण संभव होता है। इसका प्रमुख लाभ मृदा की उर्वराशक्ति और जलधारण क्षमता में सुधार, मृदा कार्बनिक कार्बन भंडारण में वृद्धि और उत्सर्जन में कमी है। जैविक पद्धतियों के अपनाने से रासायनिक खाद की आवश्यकता कम हो जाती है। अत: उत्पादन लागत कम हो जाती है और जलवायु परिवर्तन की रोकथाम में योगदान मिलता है। इतना ही नहीं, किसान कार्बन क्रेडिट बेचकर अतिरिक्त आमदनी भी अर्जित कर सकते हैं।

कार्बन खेती से पर्यावरण संरक्षण

गीता सिंह और **काव्या टी.**

"कार्बन फार्मिंग एक ऐसी पद्धति है, जिससे किसान खेती के माध्यम से वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड को हटाकर मृदा या पौधों में संग्रहित करते हैं। इससे जलवायु परिवर्तन को नियंत्रित करने में मदद मिलती है और किसानों को अतिरिक्त आर्थिक लाभ भी प्राप्त हो सकता है। कार्बन खेती, खासकर उन क्षेत्रों के लिए अधिक लाभकारी है, जहां कृषि संसाधन कम हैं और उर्वरक या रसायन सीमित मात्रा में उपलब्ध हैं। कार्बन फार्मिंग, जलवायु परिवर्तन और खेती के बीच संतुलन बनाने में मदद करती है। यह एक टिकाऊ पद्धति है, जिसमें मृदा और प्राकृतिक संसाधनों का इष्टतम उपयोग कर पर्यावरणीय, आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से लाभ प्राप्त किया जा सकता है। हालांकि अनेक लाभ होने के बावजूद, किसान कार्बन फार्मिंग को व्यापक रूप से नहीं अपना रहे हैं। इस प्रकार आवश्यक है कि किसानों को सही जानकारी और तकनीकी सलाह प्रदान की जाए, ताकि वे इस पद्धति को अपनाकर, खेती और मृदा प्रबंधन में सुधार कर सकें तथा गैर-टिकाऊ कृषि प्रथाओं को कम कर सकें। वर्ष 2022 में पारित ऊर्जा संरक्षण (संशोधन) अधिनियम, केंद्र सरकार को कार्बन क्रेडिट ट्रेडिंग योजना निर्दिष्ट करने का अधिकार देता है। इससे कार्बन संग्रहण के लिए किसानों को एक नई आमदनी का स्रोत मिल सकता है।"

कार्बन खेती का अर्थ है कृषि गतिविधियों के माध्यम से कार्बन को संग्रहीत करना एवं खेत स्तर पर ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करना। खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार, कृषि, वानिकी और अन्य भूमि उपयोग से संबंधित गतिविधियां विश्व के कुल ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन का लगभग 24 प्रतिशत हिस्सा हैं। इसके अतिरिक्त, विश्व स्तर पर पशुपालन से प्रतिवर्ष लगभग 7.1 गीगाटन CO_2-समतुल्य गैसों का उत्सर्जन होता है, जो मानवजनित कुल ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन का लगभग 14.5 प्रतिशत है।

[1]प्रधान वैज्ञानिक; [2]पी.एचडी शोधार्थी, सूक्ष्मजीव विज्ञान विभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

इस संदर्भ में, भारत ने वर्ष 2030 तक कार्बन उत्सर्जन में 50 प्रतिशत की कटौती करने और वर्ष 2070 तक शुद्ध शून्य उत्सर्जन प्राप्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया है। भारत में अधिकांश छोटे और सीमांत किसान विविध कृषि प्रणालियां अपनाकर पारंपरिक खाद्य उत्पादों को संरक्षित करते हैं। इससे संतुलित आहार के साथ-साथ कृषि-जैव विविधता की सुरक्षा में भी योगदान मिलता है।

पारिवारिक खेती, जो मुख्य रूप से परिवार के सदस्यों के श्रम पर निर्भर करती है, भारत में कृषि का प्रमुख रूप है। इसका मुख्य कारण यह है कि देश में अधिकांश खेत छोटे या बहुत छोटे आकार के हैं, जिनकी जोत दो हैक्टर से कम होती है। ये किसान स्थानीय परंपरा और क्षेत्रीय नेटवर्क की सहायता से स्थानीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। यदि मृदा के स्वास्थ्य में निरंतर सुधार किया जाए, विशेषकर उसमें उपस्थित कार्बनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ाई जाए, तो यह प्रणाली एक अधिक टिकाऊ और उत्पादक खाद्य प्रणाली के रूप में विकसित हो सकती है।

कृषि भूमि में मृदा कार्बनिक कार्बन का भंडार बढ़ाने से वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में कमी आती है। इससे कार्बन स्थिरता प्राप्त करने में मदद

मिलती है। किसानों के लिए, मृदा में जैविक कार्बन की उच्च मात्रा के कई लाभ हैं। इनमें मृदा की उर्वराशक्ति में वृद्धि और सूखे के समय उपज में होने वाली हानि के प्रति अनुकूलता शामिल है।

उपयुक्त कृषि प्रबंधन से मृदा में कार्बनिक पदार्थ का सुधार

समेकित मृदा उर्वराशक्ति प्रबंधन

इसके अंतर्गत खनिज उर्वरकों, जैविक संसाधनों (जैसे जैव उर्वरक) और जैविक खादों का संतुलित उपयोग किया जाता है। इससे मृदा और फसलों दोनों को लाभ होता है। जैविक खादों से मृदा में पानी और उर्वरक के उपयोग की क्षमता बढ़ती है। साथ ही मृदा में पाए जाने वाले जीवाणुओं की विविधता और संख्या भी बढ़ती है।

खनिज उर्वरकों का जैविक उर्वरकों द्वारा आंशिक प्रतिस्थापन करने से, ऊर्जा-गहन खनिज उर्वरकों के उत्पादन से होने वाले उत्सर्जन में कमी आती है। हालांकि, मृदा में नाइट्रोजन की वृद्धि के कारण अतिरिक्त नाइट्रोजन ऑक्साइड उत्सर्जन हो सकता है।

कृषि-वानिकी प्रणाली

इस पद्धति में वृक्ष, फसलें और पशुपालन एक साथ शामिल किए जाते हैं। यह प्रणाली भूमि से कार्बन को ज्यादा मात्रा में संचित कर सकती है। इसके अतिरिक्त ग्रीनहाउस गैसों से उत्सर्जन को कम कर सकती है। इस प्रकार यह प्रणाली वैश्विक जलवायु परिवर्तन की गति को धीमा करने में मदद करती है।

जैविक खेती से उत्पादन

फसल चक्र अपनाना

मृदा कार्बनिक कार्बन संचयन के लिए फसल चक्रण की गहनता आवश्यक है। फसल चक्रण में मृदा की गुणवत्ता में सुधार, पोषक तत्वों का बेहतर प्रबंधन तथा कीट और खरपतवार के दबाव से निपटने के लिए एक ही भूमि पर क्रमिक रूप से विभिन्न फसलें उगाना शामिल है। फसल प्रणाली की गहनता प्रकाश संश्लेषण की अवधि को बढ़ाती है। इससे मृदा कार्बनिक कार्बन संचयन में वृद्धि होती है।

अनाज, फलियां और तिलहनी फसलों का चक्रण मृदा कार्बनिक कार्बन के संचयन को विभिन्न स्तर पर प्रभावित करता है। इसका मुख्य कारण है प्रकाश संश्लेषण की गुणवत्ता और मात्रा में भिन्नता, बायोमास संचय, मृदा पोषक तत्वों में परिवर्तन तथा मृदा में सूक्ष्मजीवों और उनके कार्यों पर पड़ने वाला प्रभाव। इसके अंतर्गत विशेष रूप से हरी खाद, जिन्हें मुख्य फसल से पहले बोया जाता है और फिर खेत में ही जोत (मिश्रित) दिया जाता है, ताकि मृदा की उर्वराशक्ति बढ़े। ये फसलें मृदा में जैविक पदार्थ और कार्बन की मात्रा को बढ़ाती हैं।

भारत में प्रमुख हरी खाद वाली फसलों में प्रमुख सनई, ढैंचा, मूंग, बरसीम, लोबिया हैं। इन्हें खेत में जोतने पर ये जैविक पदार्थ का स्रोत बनकर मृदा में ऑर्गेनिक कार्बन जोड़ती हैं।

देश के विभिन्न राज्यों में हरी खाद के प्रयोग से मृदा कार्बनिक कार्बन की मात्रा में औसतन 0.2-0.4 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। सामान्यत: 5-10 वर्षों की अवधि को मृदा कार्बनिक कार्बन संचय के लिए इष्टतम अवधि माना जाता है। कार्बन की कमी वाली शुष्क, अर्ध-शुष्क भारतीय मृदा विविध फसलचक्र के लिए उपयुक्त हैं।

एकीकृत कृषि प्रणाली

फसलों की सामूहिक खेती, पशुपालन और मत्स्य उत्पादन पर आधारित प्रणाली संसाधनों के अधिकतम उपयोग को सुनिश्चित करती है। इस प्रकार संसाधनों का चक्रीय रूप से इष्टतम उपयोग होता है। इस प्रकृति-आधारित दृष्टिकोण से जैव विविधता और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण को बढ़ावा मिलता है,जिससे अधिकतम उत्पादकता प्राप्त होती है। पशुओं का गोबर

उद्देश्य

कार्बन खेती का प्रमुख उद्देश्य मृदा की सेहत और उसकी उपज क्षमता को पारंपरिक, जैविक और जीवविज्ञान आधारित तकनीकों के माध्यम से बेहतर बनाना है। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, मृदा की ऊपरी परत की क्षति से मृदा गुणवत्ता, फसल उत्पादन और जलवायु परिवर्तन की शमन क्षमता में कमी आ रही है। मृदा स्वास्थ्य सीधे तौर पर जैविक कार्बन की मात्रा पर निर्भर करता है। और यही जैविक कार्बन की मात्रा सीधे तौर पर मृदा की जलधारण क्षमता, जैव विविधता और उर्वराशक्ति से गहराई से जुड़ी हुई है। भारत की अधिकांश मृदा में जैविक कार्बन की मात्रा कम पाई जाती है। इस कारण इनकी उपजाऊ शक्ति भी सीमित हो जाती है। ऐसी स्थिति में खेती के लिए उन तकनीकों की आवश्यकता है, जिनमें बाहरी रसायनों का कम से कम उपयोग हो और उत्पादन अधिक प्राप्त किया जा सके। एक अनुमान के अनुसार, यदि मृदा में जैविक कार्बन की मात्रा 1 प्रतिशत बढ़ जाए, तो लगभग 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन उर्वरक की आवश्यकता समाप्त हो जाती है। इससे मृदा की जलधारण क्षमता बढ़ती है और लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या में भी वृद्धि होती है। मृदा में ये सूक्ष्मजीवाणु पोषक तत्वों को उपलब्ध करवाने में अहम भूमिका निभाते हैं। इसलिए, खेती के ऐसे तरीके अपनाने चाहिए, जो इन जीवाणुओं की संख्या और गतिविधियों को प्रोत्साहित करें।

और घास चरने की प्रक्रिया से मृदा में कार्बन का संचय होता है। किसान जब खेती के साथ पशुपालन करते हैं और जैविक खाद एवं कम्पोस्ट का उपयोग करते हैं, तो इससे मृदा स्वस्थ बनती है एवं पर्यावरण को भी लाभ पहुंचता है।

कम और प्रतिस्थापित स्रोतों का उपयोग

फसल अवशेषों और अन्य जैविक बायोमास को विभिन्न तरीकों से कुशलतापूर्वक पुनर्चक्रित किया जा सकता है, जैसे कि कम्पोस्ट खाद बनाना या बायोचार में परिवर्तित करना। इन उत्पादों का मृदा में पुन: उपयोग किया जा सकता है। ये दोनों उत्पाद अपशिष्ट को स्थिर कार्बन रूपों में परिवर्तित करने के प्रभावी साधन हैं, जो मृदा में लंबे समय तक बने रहते हैं। ये बायोमास की मात्रा को कम करते हैं और पौधों के लिए पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ावा देते हैं।

जीरो टिलेज (बिना जुताई खेती)

जीरो टिलेज एक आधुनिक कृषि तकनीक है। इसमें खेत में सीधे बीज की बुआई कर देते हैं। विश्वभर के 50 से अधिक अध्ययनों के विश्लेषण में विभिन्न देशों, मृदा के प्रकारों और फसलों में जीरो टिलेज के प्रभाव का मूल्यांकन किया गया। जीरो टिलेज प्रणाली को 3-10 वर्ष तक अपनाने से सूक्ष्मजीव सक्रिय रहते हैं, मृदा की संरचना बनी रहती है, कार्बन की क्षरण दर घटती है और कार्बन का भंडारण औसतन 10-15 प्रतिशत तक बढ़ता है। मृदा की सतह पर फसल अवशेषों को बनाए रखने से मृदा जैविक कार्बन में 73.9 प्रतिशत तक वृद्धि हुई है।

मृदा जैविक कार्बन के स्तर में सुधार के लाभ

- मृदा संरचना में सुधार होता है
- जलधारण क्षमता और सूखा प्रतिरोध बढ़ता है
- भूमिगत जैविक गतिविधियां सक्रिय होती हैं
- उच्च जलधारण क्षमता से बाढ़ और जल कटाव का जोखिम कम होता है।

इसके परिणामस्वरूप, मृदा की उर्वराशक्ति और फसल की उपज में सुधार होता है। इसलिए, मृदा जैविक कार्बन के स्तर में वृद्धि टिकाऊ कृषि और जलवायु परिवर्तन अनुकूलन का प्रमुख सिद्धांत रही है।

फसल चक्र विविधता एवं कृषि वानिकी

लंबे और अधिक विविध फसलचक्र तथा कृषि-वानिकी प्रणालियों से मृदा के ऊपर जैव विविधता में वृद्धि होती है। इससे परागण सेवाएं और कीट नियंत्रण बेहतर होता है। कैच फसलों की खेती और कम जुताई प्रथाओं से एक सतत मृदा आवरण बनता है, जो कटाव और भूजल संदूषण के जोखिम को कम करता है। फलियां और दलहनी फसलों के उत्पादन की हिस्सेदारी बढ़ाने से पौधे आधारित प्रोटीन का उच्च घरेलू उत्पादन भी होता है।

उत्तरी भारतीय परिस्थितियों में अलग-अलग अवधियों-लघु (3 वर्ष), मध्य (6 वर्ष) और दीर्घ (9 वर्ष) के लिए संरक्षित कृषि को अपनाने से ऊपरी मृदा (0-15 सें.मी.) एसओसी में पारंपरिक कृषि की तुलना में क्रमश: 16.32 प्रतिशत, 38.77 प्रतिशत और 61.22 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

भारत में कृषि-वानिकी वृक्षों को फसलों और पशुधन के साथ एकीकृत करती है। इससे आजीविका, पोषण और पर्यावरणीय स्थिरता के अनेक लाभ मिलते हैं। यह प्रणाली कृषि उत्पादकता बढ़ाने, जलवायु परिवर्तन को कम करने और ग्रामीण आजीविका सुधारने में सहायक है। इसके माध्यम से उच्च आर्थिक लाभ, रोजगार के अवसर, उत्पादन प्रणालियों का लचीलापन, खाद्य सुरक्षा, आर्थिक सशक्तिकरण और असमानता में कमी लाई जा सकती है।

सरकार के अनुसार, वर्तमान में 28.42 मिलियन हैक्टर क्षेत्र में कृषि वानिकी अपनाई जाती है। यह गतिविधि मुख्यत: निर्वाह कृषकों द्वारा अपनाई जाती है। कृषि वानिकी गतिविधियों के माध्यम से संचित कार्बन डाइऑक्साइड को कार्बन क्रेडिट के रूप में बेचने की संभावनाएं भी हैं। इससे किसानों के लिए आर्थिक लाभ के अवसर बढ़ते हैं। ■

हरी खाद ढैंचा

हरी खाद के लाभ

- गहरी जड़ें मृदा में कार्बन को लंबे समय तक बनाए रखती हैं।
- सूक्ष्मजीवों की वृद्धि होती है जिससे कार्बन चक्र मजबूत होता है।
- वायुमंडल से नाइट्रोजन स्थिरीकरण होता है जिससे मृदा की उर्वराशक्ति और पौधों का कार्बन ग्रहण बढ़ता है।
- मृदा की संरचना और जलधारण क्षमता में वृद्धि होती है।
- रासायनिक खाद की जरूरत घटती है, विशेष रूप से लागत में बचत होती है।

लेखकों से अनुरोध

आज सूचना प्रौद्योगिकी के बदले हुए कदमों को हमारे पाठक और लेखक दोनों ने पहचाना है। पाठकगण लेखकों से सीधी बात कर सकें, इसलिए हम चाहते हैं कि सभी लेखक अपने लेख पोर्टल epatrika.icar.org.in में भेजने के साथ अपना ई-मेल पता तथा मोबाइल नम्बर अवश्य दें।

संपादक

अरुणाचल प्रदेश में क्विनोआ की खेती

रघुवीर सिंह[1] और **नीलम शेखावत**[2]

"क्विनोआ एक पोषक तत्वों से भरपूर छद्म अनाज है, जिसे सुपरफूड माना जाता है। यह पूरी तरह से ग्लूटेनमुक्त होता है और इसमें सभी आवश्यक अमीनो अम्ल भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं। यह स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी अनाज है। भारत में, विशेष रूप से अरुणाचल प्रदेश जैसे पूर्वोत्तर राज्यों में, इसकी खेती की अपार संभावनाएं हैं। यह फसल कम पानी और न्यूनतम देखभाल में भी अच्छी उपज देती है। अरुणाचल प्रदेश में छोटे और सीमांत किसानों के लिए यह फसल आय और पोषण सुरक्षा में सुधार कर सकती है। उन्नत कृषि तकनीकों जैसे कि उचित बीज दर, पंक्ति-दूरी, जैविक कीट एवं रोग प्रबंधन, तथा जल प्रबंधन अपनाकर उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।"

क्विनोआ एक छद्म अनाज है, जो अपने उच्च पोषण मूल्य और अनुकूल कृषि विशेषताओं के कारण वैश्विक स्तर पर सुपरफूड के रूप में प्रसिद्ध हो रहा है। भारत में, विशेष रूप से अरुणाचल प्रदेश और अन्य पूर्वोत्तर राज्यों में, इसकी खेती की अपार संभावनाएं हैं। यहां की भौगोलिक और जलवायु परिस्थितियां क्विनोआ उत्पादन के लिए अनुकूल है। इस प्रकार यह फसल स्थानीय किसानों के लिए आर्थिक और पोषक लाभ भी प्रदान कर सकती है।

क्विनोआ पारंपरिक अनाजों (जैसे गेहूं और चावल) का विकल्प है। यह ग्लूटेनमुक्त होता है। इसमें सभी आवश्यक अमीनो अम्ल पाए जाते हैं।

[1]अखिल भारतीय संभावित फसलों पर समन्वित अनुसंधान नेटवर्क, भाकृअनुप-उत्तर-पूर्व पहाड़ी क्षेत्र के लिए अनुसंधान परिसर, अरुणाचल प्रदेश केंद्र, बसर-791101; [2]भाकृअनुप-राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, क्षेत्रीय केंद्र, जोधपुर-342003 (राजस्थान)

पोषण विशेषताएं

क्विनोआ को संपूर्ण प्रोटीन स्रोत माना जाता है। इसमें सभी आवश्यक अमीनो अम्ल मौजूद होते हैं। यह आयरन, मैग्नीशियम, जिंक, विटामिन 'बी' और फाइबर से भरपूर होता है। इसके अलावा, यह ग्लूटेनमुक्त अनाज होता है। इससे यह उन लोगों के लिए भी उपयुक्त है, जो ग्लूटेन संवेदनशीलता या सीलिएक रोग से ग्रसित हैं।

सुपरफूड अनाज

लाभकारी

अरुणाचल प्रदेश की जलवायु और भूमि की संरचना क्विनोआ की खेती के लिए उपयुक्त मानी जाती है। इस क्षेत्र में छोटे और सीमांत किसान मुख्य रूप से परंपरागत फसलों पर निर्भर रहते हैं। इन क्षेत्रों में कम आय और विपणन की चुनौतियां होती हैं। क्विनोआ जैसी उच्च मूल्य वाली फसलें न केवल किसानों की आय में वृद्धि कर सकती हैं, बल्कि पोषण सुरक्षा को भी सुदृढ़ कर सकती हैं। इसकी खेती जनजातीय समुदायों के लिए आर्थिक रूप से लाभकारी सिद्ध हो सकती है। यह फसल कम निवेश में अधिक उत्पादन देती है और जैविक खेती के लिए उपयुक्त है। यदि सही विपणन और सरकारी समर्थन प्राप्त हो, तो अरुणाचल प्रदेश क्विनोआ उत्पादन का एक महत्वपूर्ण केंद्र बन सकता है। इसके अलावा, स्थानीय किसानों को संगठित करने और उनके उत्पादों को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजारों तक पहुंचाने के लिए सहकारी समितियां और स्टार्टअप्स की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है।

जलवायु और मृदा

- **जलवायुः** क्विनोआ की फसल को 10 से 30 डिग्री सेल्सियस तक के तापमान में उगाया जा सकता है। यह सूखा सहिष्णु फसल है और 300-1000 मि.मी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त होती है।

गुणकारी क्विनोआ

- **मृदा:** रेतीली दोमट से लेकर चिकनी दोमट मृदा सबसे उपयुक्त होती है। पी-एच मान 4.0 से 6.5 के बीच होना चाहिए।

बीज की मात्रा और बुआई

बीज की मात्रा: 3-5 कि.ग्रा./हैक्टर।

बुआई का समय

- समशीतोष्ण क्षेत्रों में अक्टूबर-नवंबर (रबी)।
- उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में फरवरी-मार्च।

बुआई की विधि

- **पंक्ति से पंक्ति की दूरी:** 25-30 सें.मी.।
- **पौधे से पौधे की दूरी:** 10-15 सें.मी.।

उन्नत किस्में

हिम शक्ति: उच्च उत्पादकता, पोषक तत्वों से भरपूर, भारतीय जलवायु के लिए उपयुक्त।

- **अमरिला मारांगनी:** इस किस्म के पीले बीज वाले दाने होते हैं। इसका स्वाद हल्का मीठा होता है एवं उच्च प्रोटीन की मात्रा पाई जाती है।
- **चेरी वनिल:** हल्के गुलाबी से क्रीम रंग के बीज, सुगंधित और मीठे स्वाद के साथ।
- **टिटिकाका:** यह एक जल्दी पकने वाली किस्म है। इसके दाने छोटे, लेकिन घने होते हैं। यह उच्च उपज देने वाली किस्म है।

प्रमुख प्रकार

- **सफेद क्विनोआ:** यह सबसे सामान्य प्रकार है। इसका स्वाद हल्का होता है और इसे पकाने में कम समय लगता है।
- **लाल क्विनोआ:** इसका रंग पकाने के बाद भी लाल बना रहता है। यह मुख्यत: सलाद में उपयोग के लिए उपयुक्त होता है।
- **काला क्विनोआ:** इसका स्वाद हल्का मीठा होता है और पकाने के बाद भी इसका गहरा काला रंग बरकरार रहता है।

मुख्य कीटों का नियंत्रण

एफिड

- नीम तेल (3 प्रतिशत) का छिड़काव करें।
- इमिडाक्लोप्रिड/0.3 मि.ली./लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

पोषण से भरपूर क्विनोआ

कटवर्म

- बुआई से पहले खेत की गहरी जुताई करें।
- रात में प्रकाश प्रपंच का उपयोग करें।

सफेद मक्खी

- इस कीट को नियंत्रित करने हेतु पीले चिपचिपे ट्रैप खेत में लगाएं।

सेमीलूपर

- बैसिलस थुरिंजिएन्सिस का छिड़काव करें।
- फेरोमोन ट्रैप का उपयोग करें।

मुख्य रोगों का प्रबंधन

डाउनी मिल्ड्यू

- खेत में उचित जल निकासी सुनिश्चित करें।
- कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.25 प्रतिशत) का छिड़काव करें।

न्यूनतम देखभाल भरपूर उपज

अल्टरनेरिया लीफ ब्लाइट

- प्रभावित पौधों को नष्ट करें।
- कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.25 प्रतिशत) का छिड़काव करें।

जड़ गलन रोग

- स्वस्थ एवं प्रमाणित बीजों का उपयोग करें।
- ट्राइकोडर्मा विरिडी (10 ग्राम/कि.ग्रा.) से बीज उपचार करें।

कटाई और उपज

- **कटाई का समय:** जब पौधों की पत्तियां पीली पड़ जाएं और दाने सख्त हो जाएं।
- **उपज:** औसत उत्पादन 10-15 क्विंटल/हैक्टर।

भंडारण और विपणन

कटाई के बाद बीजों को अच्छी तरह सुखाकर 10 प्रतिशत से कम नमी पर भंडारित करें।

क्विनोआ की उच्च मांग के कारण जैविक और निर्यात बाजारों में इसका अच्छा मूल्य मिलता है।

अरुणाचल प्रदेश में क्विनोआ की खेती न केवल कृषि क्षेत्र में नवाचार ला सकती है, बल्कि इस फसल का उत्पादन जनजातीय किसानों के लिए आजीविका के नए अवसर भी प्रदान कर सकता है। यह पोषण सुरक्षा, आय वृद्धि और जैविक खेती को बढ़ावा देने में सहायक हो सकता है। उचित नीतिगत योजना और विपणन नीतियों को अपनाकर इस सुपरफूड को मुख्यधारा की खेती में शामिल किया जा सकता है।

बकरीपालन से आदिवासी कृषकों का उत्थान

पी. मूवेंथन[1], **हेमप्रकाश वर्मा**[2] और **सुमन सिंह**[3]

"बकरी को भारत में 'गरीबों की गाय' के नाम से भी जाना जाता है। लघु एवं सीमांत क्षेत्रों के किसानों की आजीविका में बकरीपालन का बहुत बड़ा योगदान है। बकरियां बहुमुखी पशु हैं, जो दूध, मांस, फाइबर और खाद प्रदान करती हैं। बकरी उत्पादन में 148.88 मिलियन से अधिक की आबादी के साथ भारत दुनिया में पांचवें स्थान पर है, जो वैश्विक आबादी का 13.39 प्रतिशत है। हमारा देश बकरी के मांस उत्पादन में भी दूसरे स्थान पर है, जो सकल घरेलू उत्पाद में 8 प्रतिशत का योगदान देता है और 4 प्रतिशत ग्रामीण आबादी को रोजगार प्रदान करता है। लघु और सीमांत किसानों के लिए बकरीपालन एक लाभदायक उद्यम है। इसमें बहुत कम निवेश की आवश्यकता होती है और यह गाय या भैंस पालन का एक लाभदायक विकल्प हो सकता है। बकरियों को दूध और मांस के लिए पाला जाता है, जो भूमिहीन, लघु और सीमांत किसानों की अर्थव्यवस्था और पोषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।"

बकरीपालन कम उपजाऊ भूमि के लिए लाभकारी उद्यम है। ये पशु कठोर वातावरण परिस्थितियों में भी जीवित रह सकते हैं। इस कारण बकरीपालन ग्रामीण क्षेत्रों में एक आवश्यक उद्यम बन जाता है। वैश्विक स्तर पर, गाय के दूध की तुलना में बकरी के दूध का अधिक सेवन किया जाता है। छत्तीसगढ़ के आदिवासी गरीब और भूमिहीन या सीमांत किसानों के लिए बकरीपालन अतिरिक्त एवं नियमित आय का साधन होने के साथ-साथ एक वैकल्पिक लाभदायक उद्यम के रूप में तेजी से उभर रहा है।

[1]वरिष्ठ वैज्ञानिक; [2]यंग प्रोफेशनल; [3]सीनियर रिसर्च फैलो, भाकृअनुप-राष्ट्रीय जैविक स्ट्रैस प्रबंधन संस्थान, बरोंडा, रायपुर (छत्तीसगढ़)

बकरीपालन से आजीविका

आर्थिक रूप से कमजोर ग्रामीणों के आहार और पोषण सुरक्षा में बकरियां महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। खासतौर पर वर्षा आधारित क्षेत्रों में जहां फसल उत्पादन अनिश्चित है। बड़े जुगाली करने वाले पशुओं को पालना चारे और चारे की भारी कमी के कारण कठिन होता है। बकरीपालन अन्य पशुओं की तुलना में अलग-अलग आर्थिक और संचालन संबंधी लाभ प्रदान करता है। इसमें कम प्रारंभिक निवेश, कम आदानों की आवश्यकता, अधिक प्रजनन, जल्दी यौन परिपक्वता और विपणन में आसानी होती है। बकरियां प्रतिकूल परिस्थितियों में उपलब्ध झाड़ियों और वृक्षों पर उपलब्ध चारे से कुशलतापूर्वक जीवित रह सकती हैं। इसके अतिरिक्त बेहतर मूल्य प्राप्त करने के लिए आसपास के बाजारों के साथ संबंध बनाकर बकरियों की बिक्री के संबंध में भी किसानों को सहायता प्रदान की गई। इससे बकरियों की बिक्री सुगम हुई।

चुनौतियां

कसडोल ब्लॉक में मुख्य रूप से

आदिवासी किसानों की आबादी अधिक है। खरीफ के मौसम में मुख्यत: धान की कटाई के बाद कोई नियमित आय का स्रोत उपलब्ध नहीं होता। इस वजह से 40 से 60 प्रतिशत किसान वैकल्पिक आजीविका की तलाश में दूसरे राज्यों की ओर पलायन करने को मजबूर हो जाते हैं।

अपनाई गई विस्तार गतिविधि

सुदूर क्षेत्र में ग्रामीणों के सामने आने वाली विभिन्न चुनौतियों की पहचान करने के बाद, उन्हें वैकल्पिक आजीविका के रूप में बकरीपालन अपनाने का सुझाव दिया गया। महिलाओं सहित 15 से 20 सदस्यों वाले किसानों का एक समूह बनाया गया। सभी पांच गांवों में कुल पांच समूह बनाए गए। इसके बाद उन्हें इटारसी (मध्य प्रदेश) से उन्नत नस्ल की सिरोही, जमुनापारी और बारबरी बकरियां उपलब्ध करवाई गईं। किसानों को कुल 83 बकरियां प्रदान की गई, जिनमें 5 नर और 78 मादा बकरियां शामिल थीं। किसानों को स्थानीय स्तर पर उपलब्ध चारा और अन्य आवश्यक सामग्री जैसे हरी पत्तियां भी प्रदान की गईं। स्थानीय पशु चिकित्सा विभाग की मदद से टीकाकरण, स्वास्थ्य देखभाल गतिविधियां और अन्य क्षमता निर्माण कार्यक्रम आयोजित किए गए।

उन्नत प्रबंधन से स्वस्थ पशुपालन

बकरी पालन में महिलाओं की अहम भूमिका

आदिवासी किसानों के लिए उपयोगी नस्लें

सिरोही नस्ल

इन बकरियों का शरीर हृष्ट-पुष्ट गहरीला मध्यम आकार का होता है। इनके कान चपटे नीचे की ओर लटके हुए लंबे पत्तेनुमा होते हैं। सिरोही मांस एवं दूध के लिए अच्छी मानी जाती है। यह एक बार में आमतौर पर 2 बच्चों को जन्म देती है। इसके शरीर पर गहरे और हल्के भूरे रंग के धब्बे पाये जाते हैं। पूंछ छोटी और ऊपर की ओर उठी होती है। गले के नीचे अंगुली के समान 2 गुल्टे (मांसल भाग) होते हैं। मुंह के जबड़े के नीचे की ओर दाढ़ीनुमा बाल पाए जाते हैं।

यह नस्ल 115 दिनों की अवधि में 75 कि.ग्रा. दूध देती है। नर बकरों का वजन 40-50 कि.ग्रा. तक और मादा का 23-27 कि.ग्रा. होता है। यह नस्ल मुख्य रूप से राजस्थान के अरावली पर्वत क्षेत्रों में (नागौर, टौंक, राजसमंद, उदयपुर, सिरोही एवं अजमेर) पायी जाती है।

जमुनापारी नस्ल

जमुनापारी बकरी दूध और मांस दोनों के लिए उपयुक्त दोहरे उद्देश्य वाली नस्ल है। यह सबसे तेजी से बढ़ने वाली नस्ल है। यह बकरी 9 महीने के अंतराल में लगभग 28 कि.ग्रा. वजन प्राप्त करती है। जमुनापारी

सारणी: सिरोही, जमुनापारी और बारबरी नस्ल की कुल 83 बकरियों का लाभ और लागत विश्लेषण

लागत प्रति वर्ष				लाभ प्रति वर्ष			
वस्तुएं	दर (रुपये प्रति ईकाई)	कुल आवश्यकता	आवर्ती लागत की कुल राशि (रुपये)	वस्तुएं	दर (रुपये प्रति ईकाई)	मात्रा (कि.ग्रा.)	कुल राशि (रुपये)
चरवाहा	415	12 महीना	4980	जीवित शरीर का वजन	430	1320	567600
चिकित्सा और टीकाकरण	450	83	37350				
शेड (सं.)	230000	1	230000				
पालन-पोषण की कुल लागत			272330	पालन-पोषण का कुल लाभ			567600
शुद्ध आय	295270						
लाभ: लागत अनुपात	2.08						

भारत से उत्पन्न होने वाली खूबसूरत नस्लों में से एक है, जो अपने लंबे पेंडुलस कानों के लिए प्रसिद्ध है। यह नाम उत्तर प्रदेश में जमुना नदी (जमना पार) के स्थान से लिया गया है। जमुनापारी को कुछ अन्य नामों जैसे-जमनापारी, राम सगोल के नाम से भी जाना जाता है।

बारबरी नस्ल

बारबरी बकरियां मांस उत्पादन और ट्रिपल किडिंग के लिए भी जानी जाती हैं। यह नस्ल जल्दी परिपक्व हो जाती है और सामान्य बकरी रोगों से प्रतिरोधी होती है। बारबरी बकरी का मांस रूपांतरण अनुपात अच्छा होता है। यह संयमित और स्टॉल-फीड सिस्टम के तहत पालन के लिए अत्यधिक उपयुक्त है।

यह नस्ल दूध उत्पादन में भी अच्छी मानी जाती है और अत्यधिक विपुल होती है। यह नस्ल मुख्य रूप से मांस उत्पादन के लिए उपयोग की जाती है। यह पंजाब, राजस्थान, आगरा तथा उत्तर प्रदेश के कुछ जिलों में पाई जाती है। यह एक मध्यम ऊंचाई का पशु है, जिसके शरीर का आकार छोटा होता है। इसके छोटे और ट्यूबलर कान होते हैं। नर बारबरी का वजन 38-40 कि.ग्रा. और मादा का वजन 23-25 कि.ग्रा. होता है। नर बारबरी की लंबाई लगभग 65 सें.मी. और मादा की लंबाई लगभग 75 सें.मी. होती है। नर और मादा बारबरी बकरी दोनों की बड़ी एवं मोटी दाढ़ी होती है।

■

ग्रामीण आजीविका में बकरी पालन का महत्व अधिक

बकरीपालन के फायदे

- बकरीपालन में पशु के छोटे आकार और शांत स्वभाव के कारण कम आरंभिक निवेश की आवश्यकता होती है। इससे आवास और प्रबंधन संबंधी समस्याएं कम होती हैं। इसके साथ ही विशेष आश्रय और आहार की आवश्यकता नहीं होती है। बकरीपालन का कार्य महिलाओं द्वारा भी आसानी से किया जा सकता है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में बकरीपालन लाभकारी रोजगार प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके अलावा, बकरियां मांस, दूध और खाद का उत्पादन करके बहुउद्देश्यीय लाभ प्रदान करती हैं।
- यह ग्रामीण निम्न आय वर्गों के लिए रोजगार उत्पन्न करता है। साथ ही बकरी के मांस और दूध उत्पादों पर आधारित कुटीर उद्योगों के लिए संभावना प्रदान करता है।
- बकरियों को खिलाना, दूध निकालना और उनकी देखभाल करना सरल कार्य हैं। इसके लिए व्यापक उपकरण या अतिरिक्त प्रयास की आवश्यकता नहीं होती है।
- ये पशु 10-12 महीनों में यौन परिपक्वता प्राप्त करते हैं। इनका गर्भकाल छोटा होता है। बकरियां 16-17 महीनों में दूध देना शुरू कर देती हैं।
- बकरियों को उन क्षेत्रों में सफलतापूर्वक पाला जा सकता है, जहां चारे के संसाधन सीमित हैं।
- बकरीपालन में पूंजी पर 50 प्रतिशत तक का लाभ प्राप्त होता है।
- ये पशु विभिन्न पत्तियों, झाड़ियों और रसोई अपशिष्ट आदि को खाकर अपना विकास कर सकते हैं। बकरीपालन एक किसान के लिए लाभदायक हो सकता है और मिश्रित खेती में अच्छी तरह से समावेशित हो जाता है।
- बकरियां शुष्क से लेकर ठंडी, गर्म, आर्द्र और विविध कृषि-जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल होने में भी सक्षम हैं।
- इन्हें विभिन्न जलवायु परिस्थितियों, मैदानी एवं पहाड़ी इलाकों, रेतीले क्षेत्रों और उच्च ऊंचाई पर आसानी से पाला जा सकता है।
- बकरी का मांस दुबला, कम कोलेस्ट्रॉल युक्त और कम वसा वाले आहार के लिए उपयुक्त होता है।
- बकरी का दूध पचने में आसान और एलर्जी रहित होता है, जो भूख और पाचन क्षमता में सहायता करता है।

सूचना

ग्राहकों से निवेदन है कि वे *'खेती'* पत्रिका हेतु अपना चंदा समय से पूर्व भेजने की व्यवस्था करें, ताकि पत्रिका समय पर और लगातार मिलती रहे। यदि आपका पता बदल गया है तो उसकी तुरंत सूचना दें। इसके लिए अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख अवश्य करें।

व्यवसाय प्रभारी
कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा,
नई दिल्ली-110012

जैव उर्वरकों से बढ़ाएं मृदा एवं फसल स्वास्थ्य

रुपेश कुमार मीना, अमर सिंह गोदारा, वाई. के. सिंह और **अमीत कुमावत**

"भारत की अधिकांश जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। अधिक उत्पादन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए 1970 के दशक में हरित क्रांति की शुरुआत हुई। इसमें रासायनिक उर्वरकों के उपयोग को प्रोत्साहन मिला। तब से लेकर वर्तमान तक कृषि में सघन खेती के अंतर्गत रासायनिक उर्वरकों एवं अन्य रसायनों का प्रयोग निरंतर बढ़ता गया है। मानव स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ने के साथ-साथ इसके कई दुष्परिणाम भी सामने आए हैं, जैसे मृदा में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा में कमी, मृदा की क्षारीयता में वृद्धि, मृदा की उर्वराशक्ति में कमी तथा रसायनों के अवशेषों के कारण मृदा, जल एवं वायु प्रदूषण में वृद्धि आदि। अतः रासायनिक उर्वरकों एवं रसायनों के इन प्रभावों को देखते हुए, इनके एक सुरक्षित, सस्ते एवं पर्यावरण-अनुकूल वैकल्पिक स्रोत के रूप में जैव उर्वरकों का उपयोग एक उत्तम विकल्प है। जैव उर्वरक मृदा की जैविक गुणवत्ता एवं उत्पादकता बढ़ाने में मदद करते हैं। इसके नियमित उपयोग से सतत कृषि प्रणाली को प्रोत्साहन मिलता है और साथ ही पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में सहायता मिलती है।"

वर्तमान समय में जैविक खेती की आवश्यकता तेजी से बढ़ रही है। जैविक खेती का मुख्य उद्देश्य रासायनिक उर्वरकों एवं सिंथेटिक कीटनाशकों के स्थान पर जैविक खाद तथा अन्य जैविक उत्पादों का प्रयोग कर मृदा की उर्वराशक्ति और उत्पादकता को बढ़ाना है। इन जैविक उत्पादों में जैव उर्वरक एक महत्वपूर्ण घटक है।

सस्य विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, बीकानेर, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय-334006 (राजस्थान)

पूर्व में जैव उर्वरक विभिन्न सूक्ष्मजीवों जैसे-जीवाणु, कवक, नील-हरित शैवाल, अजोला, जलीय फर्न आदि के संवर्धन द्वारा प्रयोगशालाओं में वैज्ञानिक विधियों से तैयार किए जाते थे। इन्हें पॉलीथीन की थैलियों में पैक कर किसानों को फसलों में प्रयोग हेतु उपलब्ध करवाया जाता था। इन ठोस (वाहक-आधारित) जैव उर्वरकों में वाहक तत्व के रूप में लिग्नाइट का प्रयोग किया जाता था। लिग्नाइट का उत्पादन श्रमिकों के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता था। इसके साथ ही, इन उर्वरकों को केवल 6 माह तक ही सुरक्षित रखा जा सकता था तथा इनके परिवहन में भी कठिनाइयां आती थीं।

इन्हीं समस्याओं को देखते हुए वर्तमान समय में तरल जैव उर्वरकों का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है। तरल जैव उर्वरकों को कम से कम एक वर्ष तक सुरक्षित रखा जा सकता है। इनके उत्पादन में लगे श्रमिकों को कोई स्वास्थ्य जोखिम नहीं होता और इनका परिवहन भी सरल होता है। वर्तमान में कई निजी कंपनियों द्वारा निर्मित तरल जैव उर्वरक बाजार में उपलब्ध हैं।

तरल जैव उर्वरक

तरल जैव उर्वरकों में उपयोगी सूक्ष्मजीव होते हैं, जो वातावरण से नाइट्रोजन के अवशोषण को बढ़ाते हैं। ये जीवाणु अघुलनशील फॉस्फेट को घुलनशील बनाकर उसे पौधों को उपलब्ध

जैव उर्वरकों के लाभ एवं विशेषताएं

- मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशा में सुधार करता है।
- जैव उर्वरक फसलों की पोषक तत्वों की आवश्यकता पूरी करके उनकी उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाते हैं।
- जैव-उर्वरकों के प्रयोग से नाइट्रोजन एवं घुलनशील फॉस्फोरस की फसल के लिए उपलब्धता बढ़ती है।
- ये सूखे तथा कुछ मृदाजनित रोगों से फसल के बचाव में सहायक होते हैं।
- ये रासायनिक उर्वरकों से सस्ते होते हैं। अतः इनके प्रयोग से रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम की जा सकती है।
- इनके प्रयोग से पर्यावरण सुरक्षित रहता है।
- तरल जैव उर्वरक पर अधिक तापमान का प्रभाव कम होता है तथा गुणवत्ता प्रभावित नहीं होती है।
- तरल जैव उर्वरक हानिकारक अवशेष नहीं छोड़ता है।

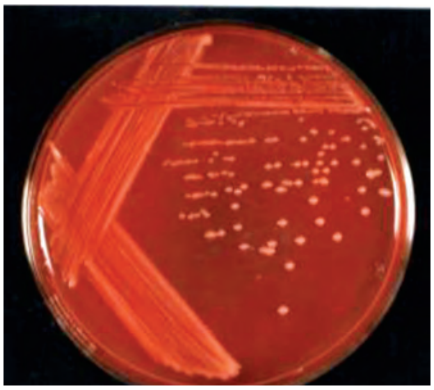

राइजोबियम संवर्धन

करवाते हैं। इससे मृदा की उर्वराशक्ति बढ़ती है और पौधों का तेज विकास होता है। इसके साथ ही जैविक कृषि के एक भाग के रूप में तरल जैव उर्वरकों का प्रयोग ड्रिप सिंचाई प्रणाली में भी किया जा सकता है।

जैव उर्वरक के प्रकार

राइजोबियम

जैव उर्वरक राइजोबियम लग्यूमिनोसेरम नामक सहजीवी जीवाणु से तैयार किए जाते हैं। इनका उपयोग मुख्य रूप से दलहनी फसलों में किया जाता है। दलहनी फसलों की जड़ों में उपस्थित गांठों में ये जीवाणु सहजीवी रूप में रहते हैं। वायुमंडल में उपस्थित स्वतंत्र नाइट्रोजन को ग्रहण कर उसे नाइट्रेट में परिवर्तित कर देते हैं। इसका उपयोग पौधों एवं जीवाणुओं दोनों द्वारा किया जाता है। इनके प्रयोग से फसल की पैदावार में 10-30 प्रतिशत तक वृद्धि होती है।

एजोस्पिरिलम

ये जीवाणु मृदा में पौधों के जड़ क्षेत्र में असहजीवी रूप में रहते हुए वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण कर पौधों को उपलब्ध करवाते हैं। यह जैव उर्वरक धान, श्रीअन्न, गेहूं, जौ तथा गन्ने की फसलों के लिए उपयुक्त है। इसके प्रयोग से फसल उत्पादन में 10-20 प्रतिशत तक वृद्धि होती है। यह जैव उर्वरक 20-40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर तक का स्थिरीकरण कर सकता है।

फॉस्फेट सॉल्युबिलाइजिंग लिक्विड बायो-फर्टिलाइजर

फसलों को दिया गया फॉस्फोरस का एक बड़ा भाग मृदा में अघुलनशील अवस्था में रह जाता है। इससे पौधे इसका उपयोग नहीं कर पाते हैं। पी.एस.बी. कल्चर (फॉस्फेट घुलनशील जीवाणु) में उपस्थित जीवाणु इस अघुलनशील फॉस्फोरस को घुलनशील बनाकर पौधों को उपलब्ध करवाते हैं। इन जीवाणुओं की वृद्धि एवं कार्य के लिए मृदा का पी-एच मान 6 से 7.5 के बीच होना चाहिए।

पी.एस.बी. कल्चर को बेसिलस पोलिमीक्सा, बेसिलस मैगाटीरियम, बेसिलस पल्वीफेसिस, स्यूडोमोनास स्ट्रियाटा, एग्रोबैक्टीरिया प्रजाति जैसे जीवाणुओं एवं एस्परजिलस एवामोरी, एस्परजिलस निजर, पेनिसिलियम डिजिटेटम जैसे कवकों का प्रयोग करके तैयार किया जाता है। ये सूक्ष्मजीवाणु एवं कवक अपनी जैविक क्रियाओं के दौरान एसिटिक, साइट्रिक, लैक्टिक तथा मैलिक जैसे कार्बनिक अम्ल का स्राव करते हैं, जो अघुलनशील मैग्नीशियम, आयरन एवं एल्युमिनियम फॉस्फेट को घुलनशील रूप में परिवर्तित कर देते हैं। इससे मृदा में फॉस्फोरस की उपलब्धता में 20-30 प्रतिशत तक वृद्धि होती है तथा उत्पादन में 10-15 प्रतिशत तक की बढ़ोतरी की जा सकती है।

लिक्विड कंसोर्टिया (एनपीके) उर्वरक

एनपीके लिक्विड बायो फर्टिलाइजर के फॉस्फोरस और पोटाश घटक कार्बनिक अम्ल का उत्पादन करते हैं, जो मृदा में अघुलनशील फॉस्फोरस और पोटाश के साथ-साथ एनपीके, डीएपी, सिंगल सुपर फॉस्फेट (एसएसपी), म्यूरेट ऑफ पोटाश (एमओपी) आदि उर्वरकों को घोलने में मदद करते हैं। इससे फसल के पौधों द्वारा इनका अवशोषण आसान हो जाता है। यह उर्वरक फसल के प्रारंभिक जड़ विकास को प्रोत्साहित करता है। पौधे की कोशिका गठन में योगदान देता है, जिसके परिणामस्वरूप रोगों से प्रतिरोध क्षमता बढ़ती है। साथ ही, यह फसलों में फूल, बीज और फलों के विकास को भी सुनिश्चित करता है। एनपीके एलबीएफ के एन घटक वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर करते हैं। फसल के पौधों को पोषण प्रदान करते हैं। इसके अलावा, एनपीके लिक्विड बायो फर्टिलाइजर विकास नियामकों, विटामिन और हार्मोन जैसे जैविक सक्रिय पदार्थ भी उत्पन्न करते हैं। एनपीके लिक्विड बायो फर्टिलाइजर के साथ टीकाकरण से प्रति एकड़ प्रति वर्ष न्यूनतम 10-12 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 8-10 कि.ग्रा. फॉस्फोरस (P_2O_3) और 6-8 कि.ग्रा. पोटाश (K_2O) की वृद्धि होती है।

जड़ों में उपस्थित गांठें

इसके अलावा ये सूक्ष्मजीव वृद्धि नियामकों का भी उत्पादन करते हैं, जो फसलों की वृद्धि और मजबूती के लिए लाभकारी होते हैं।

जिंक सॉल्युबिलाइजिंग लिक्विड बायो-फर्टिलाइजर

भारतीय मृदा में जिंक, एनपीके के बाद चौथा महत्वपूर्ण पौध पोषक तत्व बनता जा रहा है, जो पोषण गुणवत्ता के साथ-साथ फसल की उपज को भी प्रभावित करता है। पौधों के ऊतकों में जिंक की आवश्यकता अपेक्षाकृत कम सांद्रता (5-100 मि.ग्रा. प्रति कि.ग्रा.) में होती है।

पोटाश मोबिलाइजिंग लिक्विड बायो-फर्टिलाइजर (केएमबी)

पोटाश एक महत्वपूर्ण मुख्य पोषक तत्व है, जो फसल के गुणवत्तापूर्ण उत्पादन के लिए आवश्यक होता है। यह जड़ों के शुरुआती विकास को प्रोत्साहित करता है। पोटाश मोबिलाइजिंग लिक्विड बायो-फर्टिलाइजर कार्बनिक अम्ल उत्पन्न करता है, जो मृदा में पोटाश के साथ-साथ डाले गए पोटेशियम उर्वरकों को घोलने में मदद करता है। यह फसल के पौधों द्वारा आसानी से अवशोषित होता है। घुलनशीलता को प्रति एकड़ 6-8 कि.ग्रा. बढ़ाने में यह सहायक होता है। इसके अलावा, केएमबी वृद्धि नियामक भी उत्पन्न करता है, जो फसल की वृद्धि, शक्ति और उपज को 20-30 प्रतिशत तक बढ़ाने में लाभकारी है। यह मृदा को जैविक रूप से सक्रिय रखता है और मृदा के स्वास्थ्य को बनाए रखता है। जब खाद के प्रयोग से मृदा में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा में सुधार किया जाता है तो इसका प्रभाव और भी बढ़ जाता है।

सिफारिशें

- जैव-उर्वरकों को केवल पैकेट पर लिखी फसल के लिए ही, समाप्ति तिथि से पहले प्रयोग करना चाहिए।
- जैव-उर्वरकों को रासायनिक उर्वरकों एवं दवाइयों के साथ मिलाकर प्रयोग नहीं करना चाहिए।
- यदि बीजों को अन्य रासायनिक दवाओं से उपचारित करना हो, तो बीजोपचार के क्रम में सबसे पहले फफूंदनाशी, फिर कीटनाशी और अंत में जीवाणु कल्चर से बीजों को उपचारित करें।
- उपचारित बीजों को छाया में सुखाकर तुरंत बुआई करें।
- जैव-उर्वरक के पैकेट को कभी धूप में न रखें और इन्हें बुआई के समय ही खोलकर उपयोग में लें।

जिंक सॉल्युबिलाइजिंग लिक्विड बायो-फर्टिलाइजर कार्बनिक अम्ल का उत्पादन करता है। ये मृदा में अघुलनशील जिंक लवणों के साथ-साथ जिंक उर्वरकों को घोलने में मदद करते हैं। इसके परिणामस्वरूप फसल के पौधों द्वारा जिंक आसानी से अवशोषित होता है। यह पौधों के लिए जिंक की जैव-उपलब्धता को बढ़ाता है। यह मृदा को जैविक रूप से सक्रिय बनाए रखता है और स्वास्थ्य स्थिति को बनाए रखता है। यह उर्वरक देसी मृदा में जिंक को घुलनशील बना सकता है और प्रति एकड़ 1-2 कि.ग्रा. जिंक बढ़ाने में मदद करता है। साथ ही जब खाद के प्रयोग से मृदा के कार्बनिक पदार्थों की मात्रा में सुधार किया जाता है, तो जिंक अवशोषण की प्रतिक्रिया और भी बढ़ जाती है।

माइकोराइजा

वेसिकुलर आर्बस्कुलर माइकोराइजा एक कवक है। पौधों की जड़ों के साथ सहजीवी संबंध स्थापित करता है। यह संबंध पौधों एवं कवक दोनों की पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करता है। यह उर्वरक फॉस्फोरस एवं अन्य पोषक तत्व जैसे जिंक, कॉपर तथा सिल्वर के अवशोषण को बढ़ाता है। इसके साथ ही, यह जड़ों को रोग उत्पन्न करने वाले जीवों से भी बचाता है। माइकोराइजा मृदा की मूल उर्वराशक्ति को भी पुन: स्थापित करता है।

जैव उर्वरकों की उपयोग विधि

सभी जैव उर्वरकों का कार्य क्षेत्र जड़ हैं। अत: समुचित लाभ लेने हेतु इन जैविक खादों को पौधों की जड़ों तक पहुंचाना आवश्यक है। सभी जैव उर्वरकों का प्रयोग एक ही तरह से निम्न विधियों द्वारा किया जा सकता है।

- **बीज उपचार:** 1 लीटर पानी में 200 ग्राम गुड़ का घोल बनाकर ठंडा करें। फिर इस ठंडे घोल में एक पैकेट जीवाणु कल्चर मिला दें। अब इस घोल को 10-15 कि.ग्रा. बीज के ढेर पर धीरे-धीरे डालते हुए हल्के हाथों से तब तक हिलाएं, जब तक कि जैव उर्वरक की समान परत बीजों पर चढ़ न जाए। फिर बीजों को किसी छायादार स्थान पर सुखाकर शीघ्र ही बुआई कर दें। तरल जैव उर्वरक द्वारा बीजोपचार के अंतर्गत 1 कि.ग्रा. बीज को 2.5 से 5 मि.ली. तरल जैव खाद के साथ उचित मात्रा में पानी मिलाकर उपचारित करें।
- **पौध उपचार:** 1-2 कि.ग्रा. जैव उर्वरक का 10-20 लीटर पानी में घोल बनाकर 10-15 कि.ग्रा. बीजों द्वारा प्राप्त पौधों की जड़ों को 10-15 मिनटों तक डुबो दें। उपचारित पौधों की तुरंत रोपाई कर दें। यह विधि रोपाई वाली फसलों जैसे-धान और सब्जियों (टमाटर, बैंगन, फूलगोभी) के पौध उपचार के

एजोटोबेक्टर

ये उर्वरक बिना दलहन वाली फसलों में उपयोग किए जाते हैं। ये जीवाणु स्वतंत्र रूप से मृदा में रहते हुए वायुमंडल की नाइट्रोजन को स्थिर कर पौधों को उपलब्ध करवाते हैं। इसके साथ ही, ये इंडोल एसीटिक एसिड, जिब्रेलिक अम्ल आदि वृद्धि हार्मोन भी स्रावित करते हैं। इससे बीजों का अंकुरण एवं जमाव बेहतर होता है। ये 15-20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर तक का स्थिरीकरण कर सकते हैं। इनके प्रयोग से फसल की पैदावार में 10-20 प्रतिशत तक वृद्धि होती है। मुख्यत: इनका प्रयोग गेहूं, जौ, मक्का एवं सब्जियों में किया जाता है।

जैव उर्वरक प्रयोगयुक्त चने की फसल

सारणी 1. विभिन्न फसलों के लिए उपयुक्त राइजोबियम की प्रजातियां

राइजोबियम प्रजाति	फसल	नाइट्रोजन स्थिरीकरण (कि.ग्रा./हैक्टर)
राइजोबियम लैग्यूमिनोसेरम	मटर, मसूर, लोबिया	62-132
राइजोबियम जैपोनिकम	सोयाबीन	57-105
राइजोबियम ल्यूपिनी	ल्यूपिनस	70-90
राइजोबियम फैजियोलाई	सेम (बीन)	80-110
राइजोबियम मैलिलोटाई	मेथी,	100-150
राइजोबियम ट्राइफोलाई	बरसीम	130

लिए उपयुक्त है। इस विधि में जैव उर्वरक कल्चर की मात्रा कम लगती है तथा उपज में वृद्धि अधिक होती है। वहीं दूसरी ओर, 250 से 500 मि.ली. तरल जैव उर्वरक को 200 लीटर पानी में घोल बनाकर तैयार करें। पौधों की जड़ों को इस घोल में 30 मिनट तक डुबोकर तुरंत बुआई करें।

- **कंद उपचार:** 1-2 कि.ग्रा. जैव उर्वरक को 15-20 लीटर पानी में घोलकर साफ कपड़े से छान लें। इसे 10 क्विंटल कंदों (आलू, अदरक, अरबी आदि) पर स्प्रे करें या उपरोक्त कंदों को 10-15 मिनट तक डुबोकर तुरन्त बुआई कर दें।
- **मृदा उपचार:** इस विधि में 5-7 कि.ग्रा. जैव उर्वरक को 100-150 कि.ग्रा. खेत की मृदा या सड़ी हुई गोबर कम्पोस्ट खाद में मिलाकर, प्रति हैक्टर खेत में बुआई के समय समान मात्रा में बिखेर दें या पहली सिंचाई से पहले खेत में सुबह या शाम के समय छिड़काव कर सिंचाई कर दें। फिर एक एकड़ खेत के लिए 250 से 500 मि.ली. तरल जैव उर्वरक को 40 से 50 कि.ग्रा. मृदा, गोबर की खाद या कम्पोस्ट में मिलाकर 50-75 प्रतिशत नमी के साथ 2-3 दिनों तक रखकर अंतिम जुताई के समय खेत में मिला दें।

एक एकड़ खेत के लिए 250 से 500 मि.ली. तरल जैव उर्वरक को सिंचाई जल के साथ मिलाकर फसल में दो बार देना चाहिए।

रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता में कमी लाते हुए मृदा स्वास्थ्य को सुधारने, पर्यावरण को संरक्षित रखने, फसलों की उत्पादकता में स्थिरता लाने में तरल जैव-उर्वरक, जैविक खेती के एक अभिन्न अंग के रूप में वर्तमान समय की मुख्य मांग है। ■

नवाचार

बहु-औजार युक्त तीन पहियों की मशीन

कृषि क्षेत्र में बढ़ती हुई मजदूरों की कमी और लगातार बढ़ती मजदूरी लागत किसानों के लिए एक बड़ी चुनौती बन गई है। छोटे एवं सीमांत किसानों के सामने यह समस्या और भी गंभीर है, क्योंकि उनके पास बड़े व महंगे उपकरणों में निवेश करने की क्षमता नहीं होती। ऐसे परिप्रेक्ष्य में कर्नाटक के गडग जिले के नवप्रवर्तक श्री सुरेश मल्लेशप्पा कोण्डीकोप्पा ने अपने अनुभव और सूझबूझ से एक अत्यंत उपयोगी समाधान प्रस्तुत किया है।

श्री कोण्डीकोप्पा ने किसानों की आवश्यकताओं को नजदीक से समझा और इसी आधार पर उन्होंने एक बहु-औजार युक्त तीन पहियों की मशीन का विकास किया।

यह मशीन डीजल से चलती है और इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह एक साथ कई कार्य करने में सक्षम है। इसमें जुताई, निराई-गुड़ाई और छिड़काव करने के लिए अलग-अलग अटैचमेंट लगाए जा सकते हैं।

स्प्रे एवं निराई हेतु डीजल चालित तीन पहिया यंत्र

नवोन्मेष

इस मशीन में 50 लीटर क्षमता का टैंक और 5 मीटर लंबाई वाला बूम लगाया गया है, जिससे दवाइयों और खाद का छिड़काव आसानी से हो जाता है। छोटे किसानों को विशेष रूप से ध्यान में रखकर बनाए गए इस नवाचार से न केवल श्रम की बचत होती है, बल्कि खेती में लगने वाला समय और लागत भी काफी घट जाती है।

मुख्य विशेषताएं और लाभ

- बहु-कार्यशील कृषि वाहन
- स्थानीय स्तर पर कस्टमाइज्ड एवं किफायती
- 70-85 प्रतिशत तक श्रम की बचत
- डेढ़ वर्ष में लागत वसूल
- छोटे किसानों के लिए वहनीय यांत्रिकीकरण
- समय और श्रम में कमी

संभावनाएं

यह नवाचार विभिन्न राज्यों में अपनाया जा सकता है। इसका डिजाइन पेटेंट योग्य है और सरकारी सब्सिडी योजनाओं के तहत समर्थन प्राप्त कर सकता है।

वैज्ञानिक पुष्टिकरण

मशीन की क्षमता बढ़ाने के लिए स्टील की बजाय मजबूत फाइबर का उपयोग कर अध्ययन किया जा सकता है। इससे वजन कम और स्थिरता बढ़ेगा में कृषि होगी।

बहुउपयोगी प्राइम मूवर

उपयोगिता

यह नवाचार विशेष रूप से उन इलाकों के लिए उपयोगी है, जहां श्रमिकों की कमी या मजदूरी अधिक है। छोटे किसानों को आधुनिक यांत्रिकीकरण का लाभ देने वाला यह उपकरण खेती को अधिक उत्पादक और किफायती बनाता है।

इस प्रकार श्री सुरेश मल्लेशप्पा कोण्डीकोप्पा का यह बहु-औजार युक्त तीन पहियों की मशीन का नवाचार भारतीय कृषि के लिए एक प्रेरक उदाहरण है, जो साधारण किसानों को भी आधुनिक यांत्रिकीकरण का लाभ पहुंचा सकता है।

(स्रोत: विकसित कृषि संकल्प अभियान संकलन) ■

धान उत्पादन में अजोला की उपयोगिता

वीर सिंह, वीरेंद्र सिंह और **सत्यभान सिंह**

"भारतीय कृषि व्यवस्था में धान एक आधारभूत खाद्यान्न फसल है। इसकी खेती लाखों किसानों की आजीविका, क्षेत्रीय खाद्य सुरक्षा और देश की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करती है। वर्तमान में धान की खेती लगभग 44 मिलियन हैक्टर क्षेत्र में की जाती है। इसके उत्पादन में स्थिरता एक बड़ी चुनौती बनती जा रही है। जलवायु परिवर्तन, उर्वरकों की अत्यधिक लागत, रासायनिक कृषि प्रणाली की सीमाएं और मृदा में जैविक पदार्थों की कमी जैसी समस्याओं ने किसानों को वैकल्पिक एवं सतत समाधानों की ओर उन्मुख किया है। ऐसे में अजोला जैसे प्राकृतिक, नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जैविक स्रोत धान की खेती को नया आयाम दे सकते हैं। अजोला का उपयोग केवल वैकल्पिक उर्वरक के रूप में ही नहीं, बल्कि समग्र जैविक प्रबंधन उपकरण के रूप में भी महत्व प्राप्त कर रहा है। यह लेख अजोला के संभावित उपयोग, वैज्ञानिक महत्व, उत्पादन विधियां, लाभ, चुनौतियां और नीति संबंधी सुझावों को प्रस्तुत करता है।"

अजोला एक जलीय फर्न है, जिसे अक्सर 'हरा सोना' कहा जाता है। यह एनाबीना अजोला नामक नाइट्रोजन स्थिर करने वाली नीली-हरित शैवाल के साथ सहजीवी संबंध बनाकर जीवनयापन करता है। यह सहजीवी तंत्र धान की खेती के लिए प्राकृतिक नाइट्रोजन का एक सशक्त एवं महत्वपूर्ण स्रोत प्रदान करता है।

अजोला और धान

धान की खेती में नाइट्रोजन सबसे महत्वपूर्ण पोषक तत्व होता है। इसकी पूर्ति आमतौर पर यूरिया जैसे रासायनिक उर्वरकों से की जाती है। ये उर्वरक न केवल महंगे होते हैं, बल्कि मृदा की गुणवत्ता एवं पर्यावरण

सहायक आचार्य, स्कूल ऑफ एग्रीकल्चर साइंसेज एवं इंजीनियरिंग, आई.एफ.टी.एम. यूनिवर्सिटी, मुरादाबाद (उत्तर प्रदेश)

कम लागत अधिक मुनाफा

उर्वरक के रूप में उपयोगी

सारणी 1. अजोला की विशेषताएं

क्र.सं.	विशेषता	विवरण
1.	वैज्ञानिक नाम	अजोला पिन्नार
2.	वर्गीकरण	प्टेरिडोफाइटा-जलीय फर्न
3.	वृद्धि दर	2-5 दिनों में दोगुनी मात्रा
4.	नाइट्रोजन स्थिरीकरण	1.5-3.0 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/100 वर्ग मीटर/सप्ताह
5.	जल में फैलाव	खेत में 7-10 दिनों में पूरी सतह को ढक लेता है
6.	प्रमुख उपयोग	हरी खाद, पशु चारा, खरपतवार एवं मच्छर नियंत्रण
7.	पर्यावरणीय लाभ	मीथेन उत्सर्जन में कमी, जल संरक्षण, मृदा उर्वराशक्ति में वृद्धि

उपज वृद्धि से कारगर अजोला

को भी प्रभावित करते हैं। इस चुनौती का समाधान है-अजोला आधारित जैविक नाइट्रोजन प्रबंधन।

अजोला को धान के खेत में उगने से निम्न जैविक प्रक्रियाएं सक्रिय होती हैं:

- वायुमंडलीय नाइट्रोजन स्थिरीकरण
- जैविक कार्बन और पोषक तत्वों का संचय
- मृदा संरचना एवं उर्वरता में सुधार
- खरपतवार और कीटों पर प्राकृतिक नियंत्रण

अजोला के लाभः बहुआयामी योगदान

पोषण प्रबंधन में योगदान

अजोला धान के खेत में नाइट्रोजन की स्थिरता प्रदान करके प्रति हैक्टर 30-40 कि.ग्रा. जैविक नाइट्रोजन उपलब्ध करवाता है। इसके अलावा यह फॉस्फोरस, पोटाश, कैल्शियम, जिंक और आयरन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों की भी आपूर्ति करता है।

खरपतवार नियंत्रण

अजोला की हरित परत खेत की सतह को ढक लेती है। इससे धूप नीचे नहीं पहुंचती और खरपतवारों का अंकुरण रुक जाता है। इससे रासायनिक खरपतवारनाशकों की आवश्यकता 60 प्रतिशत तक कम हो जाती है।

पर्यावरणीय प्रभाव

- मीथेन उत्सर्जन में 25-30 प्रतिशत तक कमी आती है।
- मच्छरों के जीवनचक्र में रुकावट आती है।
- जल की सतह को ढकने से वाष्पीकरण कम होता है।

अजोला एक बहुआयामी जैविक संसाधन है, जो धान की पारंपरिक खेती में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने की क्षमता रखता है। इसके प्रयोग से उत्पादकता में वृद्धि, लागत में कमी और पर्यावरणीय स्थिरता प्राप्त होती है। वर्तमान कृषि संकट के परिप्रेक्ष्य में यह आवश्यक है कि नीति निर्माताओं, वैज्ञानिकों, विश्वविद्यालयों और कृषकों के सहयोग से अजोला को मुख्यधारा की खेती में जाए।

सारणी 2. अजोला के प्रयोग से धान की उपज और लागत में अंतर

क्र.सं.	विवरण	पारंपरिक विधि	अजोला के साथ	प्रतिशत सुधार (प्रतिशत)
1.	औसत उपज (क्विंटल/हैक्टर)	47.5	53.8	+13.3 प्रतिशत
2.	नाइट्रोजन उपयोग (कि.ग्रा./हैक्टर)	100	60	-40 प्रतिशत
3.	कुल उत्पादन लागत (रुपये/हैक्टर)	18,000	15,500	-13.8 प्रतिशत
4.	लाभ (रुपये/हैक्टर)	24,000	31,200	+30 प्रतिशत

सारणी 3. अजोला उत्पादन एवं प्रबंधन

क्र.सं.	चरण	विवरण
1.	जल स्तर	5-10 सें.मी. लगातार बनाए रखें
2.	पोषण प्रबंधन	10 प्रतिशत गोबर का घोल+10 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट+5 ग्राम चूना प्रति वर्ग मीटर
3.	वृद्धि चक्र	7-10 दिनों में कटाई और उपयोग के लिए तैयार
4.	भंडारण सुविधा	टैंक, छोटे तालाब, प्लास्टिक कुंड में उत्पादन और संरक्षण संभव

सारणी 4 चुनौतियां एवं समाधान

क्र.सं.	चुनौतियां	समाधान
1.	अत्यधिक वर्षा में बह जाना	खेत की मेड़ें ऊंची करना, जल निकासी की उचित व्यवस्था करना
2.	पक्षियों द्वारा नुकसान	खेत में जाली या नेटिंग करना
3.	उच्च तापमान में सूखना	आंशिक छायादार संरचना बनाना, जल स्तर नियंत्रित रखना
4.	प्रारंभिक इनोकुलम की उपलब्धता	ग्राम स्तर पर उत्पादन इकाइयां स्थापित करना

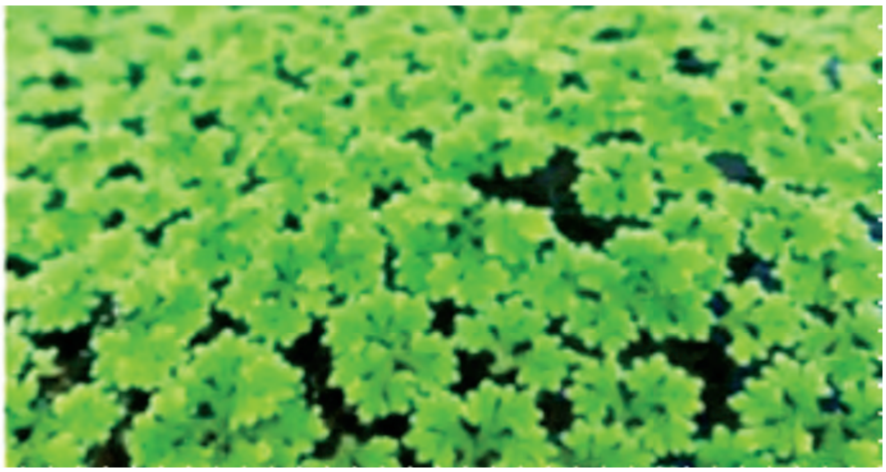

नाइट्रोजन स्थिरीकरण का प्राकृतिक साधन

पोषक तत्वों से भरपूर अजोला

उतेरा विधि से खेसारी की उन्नत खेती

अमितेश कुमार सिंह[1], **राकेश कुमार**[2], **रवि शंकर**[3], **सूर्य भूषण**[4] और **अमित कुमार सिंह**[5]

"दलहन क्षेत्र भारत की कृषि अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। वर्तमान समय में, विश्व स्तर पर भारत दलहन के आयात, उत्पादन और खपत के मामले में प्रथम स्थान पर है। वर्ष 2019-20 में भारत में दलहन का उत्पादन 26.3 मिलियन मीट्रिक टन रहा और उत्पादन में घरेलू कमी के अनुसार, 3 मिलियन मीट्रिक टन दलहन का आयात किया गया। आयात पर निर्भरता कम करने तथा महिलाओं और शिशुओं में कुपोषण की समस्या से निपटने हेतु दलहन उत्पादन स्थायी उपायों के माध्यम से बढ़ाना आवश्यक है। इस संदर्भ में, धान-परती वाले क्षेत्र जो सर्दियों के मौसम में बिना फसल के खाली रह जाते हैं, फसल गहनता के माध्यम से अवसर प्रदान करते हैं। भारत के पूर्वी क्षेत्रों में देश के कुल धान-परती क्षेत्र (11.7 मीट्रिक/हैक्टर) का 84 प्रतिशत हिस्सा है। इन क्षेत्रों के बेहतर उपयोग के लिए खेसारी की उतेरा विधि से खेती करके दलहन का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। पूर्वी भारत के अधिकतर क्षेत्रों में कृषि पूरी तरह से वर्षा आधारित है। यहां सिंचाई के सीमित साधनों के कारण रबी मौसम में खेत खाली या परती रह जाते हैं। ऐसे क्षेत्रों के लिए सघन खेती के रूप में उतेरा विधि एक अच्छा विकल्प सिद्ध हो सकती है।"

खेसारी मनुष्य और पशुओं के लिए प्रोटीन का एक समृद्ध स्रोत है। साथ ही यह एक प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट भी है, जो हृदय रोगों और कैंसर के जोखिम को कम करता है। इस दाल में प्रोटीन (31.9 प्रतिशत), कार्बोहाइड्रेट (53.9 प्रतिशत), वसा (0.9 प्रतिशत) एवं राख (3.2 प्रतिशत) की मात्रा पाई जाती है।

खेसारी मीठी-कड़वी और प्रकृति से ठंडी तासीर की होती है। खेसारी का साग खाने में रुचि बढ़ाने वाला, कफ/पित्त को कम करने वाला, शक्ति व भूख बढ़ाने वाला, हड्डियों को मजबूती देने वाला, दर्द, थकान, सूजन, जलन, हृदय रोग तथा बवासीर जैसे अनेक रोगों के लिए लाभकारी माना जाता है। इसके बीज पौष्टिक, थोड़े कड़वे, प्रकृति से ठंडी तासीर तथा कमजोरी दूर करने वाले होते हैं। इसके बीज विरेचक गुण वाले यानी पेट से मल या अवांछित पदार्थ निकालने में सहायक होते हैं। इसमें पाया जाने वाला तत्व 'ओडेप' नपुंसकता, हृदय रोग से लेकर घुटनों के दर्द और गठिया के लिए उपयोगी औषधि के रूप में माना जाता है। इसके अतिरिक्त यह पशुओं के लिए उच्च गुणवत्तायुक्त हरे चारे या भूसे के रूप में भी उपयोगी है।

[1]वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, वाराणसी-221307 (आ.न.दे.कृ. एवं प्रौ.वि.वि., कुमारगंज, अयोध्या-222429; [2]वरिष्ठ वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान), फसल अनुसंधान विभाग, पूर्वी क्षेत्र के लिए भाकृअनुप-अनुसंधान परिसर,पी.ओ.-बिहार, पशु चिकित्सा महाविद्यालय परिसर, पटना-800014 (बिहार); [3]वरिष्ठ वैज्ञानिक-सह-प्रधान; [4]वैज्ञानिक (पौध संरक्षण); ग्रामीण विकास ट्रस्ट-कृषि विज्ञान केन्द्र, चकेश्वरी फार्म, गोड्डा-814133 (झारखण्ड), [5]शोध सहायक, कृषि अर्थशास्त्र विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा-210001 (उत्तर प्रदेश)

उतेरा विधि

इस विधि को मुख्यत: झारखण्ड, बिहार, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, ओडिशा में अपनाया जाता है। इन क्षेत्रों में वर्षा आधारित धान की खेती की जाती है। इस पद्धति में धान की फसल कटाई से लगभग 15-20 दिनों पूर्व ही खेसारी के बीज खेत में छिड़ककर बुआई की जाती है। इससे धान की कटाई के समय खेसारी के बीज खेत की नमी का पूर्ण उपयोग करते हुए अंकुरित हो जाते हैं। इसके कारण खेती में संचित नमी से फसल पककर तैयार हो जाती है।

खेत की तैयारी एवं बुआई का समय

उतेरा विधि से बुआई के लिए भारी मृदा वाले खेत उपयुक्त हैं। अत: मध्यम एवं निचली भूमि का चयन करना चाहिए, भारी मृदा की जलधारण क्षमता अधिक होती है। इसके साथ ही लम्बे समय तक इस मृदा में नमी बनी रहती है। उतेरा विधि से खेसारी की खेती धान की फसल में की जाती है।

धान की फसल की कटाई से 15-20 दिनों पहले जब बालियां पकने की अवस्था में हों या 15 अक्टूबर से 15 नवंबर के बीच में खेसारी के बीज की छिटकवां विधि से बुआई करनी चाहिए। बुआई के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए, जिससे बीजों का जमाव मृदा में आसानी से हो जाए। इसके अलावा खेत में आवश्यकता से अधिक पानी की निकासी कर देनी चाहिए अन्यथा बीज के सड़ने की आशंका बनी रहती है।

पौध संरक्षण

- माहूं कीट और फलीछेदक के नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोरप्रिड 17.3 एसएल (1 मि.ली./3 ली. पानी) का छिड़काव करना चाहिए।
- चूर्णिल आसिता के नियंत्रण के लिए सल्फेक्स/थायोविट का 3 कि.ग्रा./हैक्टर या कार्बेण्डाजिम 50 डब्ल्यूपी 1 ग्रा./ली. पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें।
- मृदुरोमिल आसिता के नियंत्रण के लिए कार्बेण्डाजिम फफूंदनाशी से बीजोपचार करना चाहिए।
- उकठा रोग होने पर प्रभावित खेत में 2 से 3 वर्षों तक इन फसलों की खेती रोक देनी चाहिए अथवा रोगरोधी किस्मों का उपयोग करना चाहिए।

धान के खेत में उतेरा विधि से खेसारी की बुआई

उतेरा विधि से बोई गयी खेसारी की फसल

सारणी 1. खेसारी की उन्नत किस्में

क्र.सं.	किस्म	ओडेप (प्रतिशत)	परिपक्व (दिनों में)	औसत उपज (कि.ग्रा./हैक्टर)
1.	रतन	0.05	105-115	1530
2.	प्रतीक	0.08	110-115	1560
3.	महातिवड़ा	0.07	95-105	1550
4.	निर्मल	0.15	105-110	1500
5	पूसा-24	0.24	110-115	1655

बीज दर एवं बीजोपचार

उतेरा विधि से बुआई के लिए 70-80 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर प्रयोग करना चाहिए। मृदाजनित रोगों से बचाने के लिए बीजों को बुआई से पहले थीरम (2 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) फफूंदनाशी या ट्राइकोडर्मा जैव फफूंदनाशी 5-6 ग्राम/कि.ग्रा. से उपचारित करना चाहिए। दलहनी फसल होने के कारण खेसारी को राइजोबियम जैव उर्वरक और फॉस्फोरस घोलक जीवाणु को 15-20 ग्रा./कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। फफूंदनाशी से उपचारित करने के बाद ही जैव उर्वरक से उपचार करें।

खाद एवं उर्वरक

खेसारी की फसल के लिए नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश एवं गंधक की अनुशंसित मात्रा क्रमश: 20, 50, 30, 20 कि.ग्रा./हैक्टर फसल में यूरिया/डी.ए.पी. 2 प्रतिशत (2 ग्राम/लीटर पानी) या एन.पी.के. (19: 19: 19) का पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। पहला छिड़काव वानस्पतिक अवस्था और दूसरा फली बनने की अवस्था पर करना आवश्यक है। इससे फसल की वृद्धि एवं विकास, सूखा उत्पादन क्षमता में वृद्धि होती है।

खरपतवार नियंत्रण

खरपतवार नियंत्रण हेतु पेण्डिमेथिलीन 1.5 लीटर/हैक्टर का प्रयोग बुआई के तुरंत बाद करना चाहिए। इसके अलावा क्विजालोफॉप एथिल (टरगा सुपर) 40-50 ग्राम/हैक्टर की दर से बुआई के 15-20 दिनों बाद प्रयोग करना चाहिए अथवा हाथ से एक निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। धान की कटाई के 40-45 दिनों बाद उतेरा फसल में एक बार निराई-गुड़ाई करना आवश्यक है।

लाभकारी

खेसारी की उतेरा विधि से खेती में कुल लागत 15000-18000 रुपये/हैक्टर आती है। इस फसल का उत्पादन 12-14 क्विं./हैक्टर होता है। बाजार में खेसारी के दाने का भाव 40 रुपये/कि.ग्रा. मिलता है। इस प्रकार किसान उन्नत सस्य क्रियायें अपनाकर प्रति हैक्टर 33000-38000 रुपये प्राप्त कर सकते हैं। पूर्व में वर्षा आधारित खेती के कारण खरीफ मौसम में किसान धान की ही खेती करते थे, परन्तु अब रबी मौसम में अपशिष्ट मृदा उर्वराशक्ति और सिंचित मृदा नमी का उपयोग कर फसल गहनता बढ़ा सकते हैं। दलहनी फसल होने के कारण खेसारी मृदा की उर्वराशक्ति भी बढ़ाती है। इससे किसानों की लागत में कमी और आमदनी भी दोगुनी हो जाती है।

कटाई, मड़ाई एवं भण्डारण

फसल की कटाई उस समय करें, जब फलियों का रंग भूरा हो जाए और दानों में लगभग 15 प्रतिशत नमी हो। कटाई के बाद फसल को 3-4 दिनों के बाद धूप में सुखाकर बंडलों में बांधकर खलिहान में स्थानांतरित कर दें। मड़ाई लाठी से पीटकर या बैलों से रौंदकर की जाती है। साफ बीजों को 3-4 दिनों के लिए धूप में सुखाना चाहिए, ताकि उनकी नमी की मात्रा 9-10 प्रतिशत तक हो जाए। इसके बाद स्वच्छ डब्बों में सुरक्षित रूप से भंडारित किया जाना चाहिए। ■

सोयाबीन में समेकित कीट प्रबंधन

रूपसिंह[1], अरविन्द नागर[2], राकेश कुमार बैरवा[3], इरफान खान[4] और **सरिता[3]**

"सोयाबीन एक प्रमुख दलहनी एवं तिलहनी फसल है। इसमें 40-42 प्रतिशत प्रोटीन एवं 20 प्रतिशत तेल की मात्रा पाई जाती है। इस फसल में कीट प्रबंधन, फसल प्रबंधन का अत्यंत महत्वपूर्ण घटक है। कीटों का उचित एवं अनुशंसित तरीके से प्रबंधन नहीं किया जाये तो उपज में 30 से 40 प्रतिशत तक हानि की आशंका बनी रहती है। सोयाबीन फसल में लगने वाले 5-8 प्रकार के प्रमुख कीट पाए जाते हैं, जो भावी आर्थिक नुकसान पहुंचाते हैं। रासायनिक कीटनाशकों के अवांछित उपयोग से कीटों में रसायनों से प्रतिरोधक क्षमता निरंतर बढ़ रही है अत: वर्तमान में कीट नियंत्रण हेतु समेकित कीट नियंत्रण पद्धति को अपनाया जाना अति आवश्यक हो गया है।"

सोयाबीन, प्रोटीन एवं तेल का प्रमुख स्रोत मानी जाती है। इस फसल की खेती देश के कई हिस्सों में व्यापक रूप से की जाती है। इस फसल की बेहतर उत्पादकता के लिए कीटों से बचाव करना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। कीट प्रबंधन हेतु समय से उन्नत विधियों को अपनाकर किसान न केवल उपज में वृद्धि कर सकते हैं, बल्कि फसल को नुकसान से भी बचा सकते हैं।

प्रमुख कीट

तम्बाकू की इल्ली

सोयाबीन फसल में तम्बाकू की इल्ली के प्रकोप के कारण उत्पादन में आर्थिक नुकसान निरंतर बढ़ रहा है। इसकी वयस्क मादा अपने जीवनकाल में 1200-2000 अण्डे देती है। अण्डे 200-250 के समूह में पत्तियों की निचली सतह पर दिए जाते हैं। इल्लियां, पत्तियों को नुकसान पहुंचाती हैं, जिससे पौधे की पत्तियां जालीदार हो जाती हैं। पूर्ण विकसित इल्लियां हरे या भूरे रंग की होती हैं।

सेमीलूपर

यह सोयाबीन की पत्तियां खाने वाला प्रमुख कीट है। प्रारंभिक अवस्था में इल्लियां पत्तियों में छेद बनाकर उन्हें जालीनुमा बना देती हैं। अधिक प्रकोप हो जाने पर ये कीट कलियों, फूल, फलियों आदि को प्रभावित करती हैं। इससे अफलन की समस्या उत्पन्न हो जाती है। कम वर्षा, अधिक तापमान एवं अधिक आर्द्रता इस कीट के प्रकोप के लिए अनुकूल परिस्थितियां हैं।

तम्बाकू की इल्ली

इल्लियों का प्रकोप

विशेष

सोयाबीन की उच्च गुणवत्ता वाली और सुरक्षित उपज प्राप्त करने के लिए समेकित कीट प्रबंधन अत्यंत उपयोगी है। यह एक ऐसी वैज्ञानिक पद्धति है, जिसमें कीट नियंत्रण के लिए अलग-अलग उपायों का संतुलित उपयोग किया जाता है। इसमें जैविक नियंत्रण, पारंपरिक विधियां, यांत्रिक उपाय और आवश्यकता पड़ने पर ही रासायनिक दवाइयों का प्रयोग शामिल है। इससे फसल पर कीटों का दबाव घटता है और उपज की गुणवत्ता बनी रहती है। रसायनों का कम प्रयोग होने से उत्पादन लागत घटती है तथा लाभकारी कीट संरक्षित रहते हैं। यह पद्धति मृदा, जल और पर्यावरण को प्रदूषण से बचाती है। साथ ही, इस प्रणाली से कीटों में कीटनाशक प्रतिरोधक क्षमता विकसित नहीं होती। समेकित कीट प्रबंधन किसानों के स्वास्थ्य की रक्षा करता है और उपभोक्ताओं तक अवशेष रहित, सुरक्षित उपज पहुंचाता है। इस प्रकार सोयाबीन के उत्पादन को टिकाऊ, लाभकारी और पर्यावरण के अनुकूल बनाने में है

[1]उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़-326023 ; [2]कृषि महाविद्यालय, कोटा-324001; [1]कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा-324001; [2]कृषि विज्ञान केन्द्र, चौमूं, जयपुर-303702 (राजस्थान)

बिहार रोयेंदार इल्ली

यह सोयाबीन का प्रमुख हानिकारक कीट है। वयस्क कीट पर छोटे-छोटे काले धब्बे होते हैं। इसकी छोटी इल्लियां मटमैले रंग की होती हैं, जो बाद में लाल भूरे रंग की हो जाती हैं। इनके शरीर में बड़े-बड़े बाल उभर आते हैं। ये इल्लियां समूह में पत्तियों को खाकर, जालीनुमा बना देती हैं। इससे पौधे की पत्तियां सफेद दिखाई देती हैं।

तना मक्खी

यह सभी सोयाबीन उत्पादक क्षेत्रों में पाया जाने वाला हानिकारक कीट है। वयस्क मक्खी साधारण मक्खी जैसी परन्तु आकार में थोड़ी बड़ी दिखाई देती है। यह मक्खी पत्तियों के दलपत्रों के अंदर अण्डे देती है। इनसे छोटी इल्लियां निकलती हैं, जो पत्तियों की शिराओं के माध्यम से तने में पहुंचकर टेड़ी-मेढ़ी सुरंग बनाकर पौधे खाती हैं।

गर्डल बीटल

गर्डल बीटल कीट

तने पर कीट का प्रकोप

यह सोयाबीन का प्रमुख हानिकारक तनाछेदक कीट है। वयस्क कीट नारंगी रंग का होता है, जिसके पंखों का निचला हिस्सा काला होता है। वयस्क मादा पौधे के तना शाखा या पर्णवृंत पर दो चक्र बनाती है एवं उसके बीच में हल्के पीले रंग के अंडे देती है। इससे पौधे की ऊपरी भाग की पत्तियां सूखने लगती हैं। ये इस कीट की पहचान के प्रमुख लक्षण हैं। ये आमतौर पर फसल 25 दिनों की होने की अवस्था के बाद दिखाई देते हैं। कुछ दिनों बाद अण्डे से इल्लियां निकलकर तने को अंदर से खाकर खोखला कर देती हैं। इससे पौधा सूखने लगता है और उत्पादन में नुकसान होता है।

सेमीलूपर कीट

चने की इल्ली

यह बहुभक्षी हानिकारक कीट है, जो प्रायः सभी फसलों में नुकसान पहुंचाता है। वयस्क कीट पतंगा मटमैले रंग का होता है। इसकी इल्लियां मुख्यतः फलियों को नुकसान पहुंचाती हैं।

समेकित कीट प्रबंधन

समेकित कीट प्रबंधन से आशय है कि कीट प्रबधंन के सभी उपायों को एकीकृत रूप से अपनाया जाये। इससे कीटों की संख्या को कम कर उन्हें आर्थिक हानि सीमा स्तर के अंदर रखा जा सकेगा। सोयाबीन में कीटों की समस्या के निदान हेतु समेकित कीट प्रबंधन उपाय निम्न हैं:

- **ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई:** गर्मी के महीने (मई-जून) में गहरी जुताई करनी चाहिए। इससें भूमि में छिपे कीटों की विभिन्न अवस्थाएं, रोगों के रोगाणु, खरपतवारों के बीज आदि नष्ट हो जाते हैं।
- **बुआई का उपयुक्त समय:** सोयाबीन की बुआई जून के अन्तिम सप्ताह में

सफेद मक्खी

यह रस चूसने वाला हानिकारक कीट है। इस मक्खी के शिशु पत्तियों की निचली सतह पर चिपके रहते हैं और पत्तियों का रस चूसते हैं। इससे पत्तियां पीली पड़कर सिकुड़ जाती हैं। ये कीट एक विशेष चिपचिपा पदार्थ छोड़ती हैं जिससे पत्तियों में फफूंद विकसित हो जाती है। यह कीट पीला मोजैक विषाणु के वाहक का कार्य करता है।

सारणी: सोयाबीन में कीटों के प्रबंधन हेतु अनुशंसित कीटनाशक

कीट	कीटनाशक	दर (प्रति हैक्टर)
पत्ती खाने वाली इल्लियां	क्लोरएन्ट्रानिलिप्रोल 18.5 एस.सी.	150 मि.ली.
	इंडोक्साकार्ब 15.8 ई.सी.	333 मि.ली.
	प्रोफेनोफॉस 50 ई.सी.	333 मि.ली.
सेमीलूपर तम्बाकू की इल्ली, चने की इल्ली	क्विनालफॉस 25 ई.सी.	1500 मि.ली.
	स्पायनेटोरम 11.7 एस.सी	450 मि.ली.
	फ्लूबेंडियामाइड 39.35 एस.सी	150 मि.ली.
	फ्लूबेंडियामाइड 20 डब्ल्यू.जी.	250-300 ग्राम
गर्डल बीटल	थायक्लोप्रिड 21.7 एस.सी.	750 मि.ली.
	प्रोफेनोफॉस 50 ई.सी.	1250 मि.ली.
	बीटासायफ्लूथ्रिन 8.49+इमिडाक्लोप्रिड 19.81 ओडी	350 मि.ली.
तना मक्खी	बीटासायफ्लूथ्रिन+लैम्बडा सायहेलोथ्रिन	125 मि.ली.
सफेद मक्खी	बीटासायफ्लूथ्रिन+इमिडाक्लोप्रिड	350 मि.ली.

करने से तना मक्खी के प्रकोप से बचा जा सकता है।

- **संतुलित उर्वरक उपयोग:** सोयाबीन में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश एवं गंधक तत्वों की मात्रा 20 कि.ग्रा., 60-80 कि.ग्रा., 20 कि.ग्रा. एवं 20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर अनुशंसित है। पोटाश का उपयोग पौधों में कीट व्याधि से प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।
- **कीट प्रतिरोधी/सहनशील किस्मों का चयन:** किस्मों का चयन करते समय उत्पादन क्षमता के साथ-साथ कीट प्रतिरोधी/सहनशील किस्मों को खेती हेतु सम्मिलित करना चाहिए। सोयाबीन की कीट प्रतिरोधी/सहनशील किस्में निम्न हैं:
- **जे.एस. 95-60, जे.एस. 93-05, जे.ए.एस. 71-05, जे.ए.एस. 80-21:** पत्ती खाने वाली इल्लियों के प्रति सहनशील
- **परभणी सोना:** पत्ती खाने वाली इल्लियों, लीफ माइनर एवं तना मक्खी के प्रति सहनशील
- **एन.आर सी. 12 एवं एन.आर.सी. 7:** पत्ती खाने वाली इल्लियों एवं गर्डल, बीटल के प्रति सहनशील
- **बीजदर एवं पंक्तियों की दूरी:** सोयाबीन में बीजदर अधिक होने पर गर्डल बीटल एवं इल्लियों का प्रकोप बढ़ जाता हैं। अत: अनुशंसित बीज दर 60-80 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर एवं पंक्तियों के बीच की दूरी 30-45 सें.मी. रखना चाहिए।
- **फेरोमोन ट्रैप एवं प्रकाश जाल का प्रयोग:** सोयाबीन में पत्तियां खाने वाली इल्लियों के वयस्क पतंगों के लिए प्रकाश जाल का प्रयोग लाभकारी होता है। सोयाबीन में तम्बाकू की इल्ली एवं चने की इल्ली के प्रबधंन के लिए 8-10 फेरोमोन ट्रैप प्रति हैक्टर लगाने चाहिए।
- **'टी' आकार की खपच्चियां:** इल्लियां पक्षियों का प्रमुख आहार होती हैं। अत: कीट भक्षी पक्षियों के बैठने के लिए खेतों मे 25-30 खपच्चियां प्रति हैक्टर लगानी चाहिए।

बिहार रोयेंदार इल्ली

- **कीट ग्रसित पौधों को नष्ट करना:** प्रारंभिक अवस्था में बिहार रोयेंदार इल्ली एवं तम्बाकू इल्ली की संख्या एवं क्षमता अधिक होती है। अत: कीटग्रसित पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।
- **सूक्ष्मजीव आधारित कीटनाशकों का उपयोग:** सोयाबीन में इल्लियों के प्रबंधन हेतु बाजार में उपलब्ध जीवाणु आधारित (बी.टी. 1 लीटर प्रति हैक्टर) फफूंद आधारित (ब्यूवेरिया बैसियाना एवं नौमूरिया राइली 1 लीटर प्रति हैक्टर) एवं विषाणु आधारित (एन.पी.वी. 250 एल.ई. प्रति हैक्टर) कीटनाशकों का उपयोग करना चाहिए।
- **रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग:** सोयाबीन में प्रमुख कीटों की संख्या आर्थिक हानि स्तर से अधिक होने पर रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग किया जा सकता है। प्रमुख कीटों की आर्थिक हानि स्तर निम्न हैं:
- **तम्बाकू की इल्ली:** 10 इल्लियां प्रति मीटर फूल लगने से पूर्व की अवस्था में, 3 इल्लियां प्रति मीटर फलियां लगने की अवस्था में।
- **चने की इल्ली:** 10 इल्लियां प्रति मीटर फलियों के विकास की अवस्था में।
- **तना मक्खी:** तने में 26 प्रतिशत सुराख होने पर।
- **सेमीलूपर इल्ली:** 4 इल्लियां प्रति मीटर फूल लगने की अवस्था में।

सोयाबीन की स्वस्थ फसल

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
के चुनिंदा हिन्दी प्रकाशन

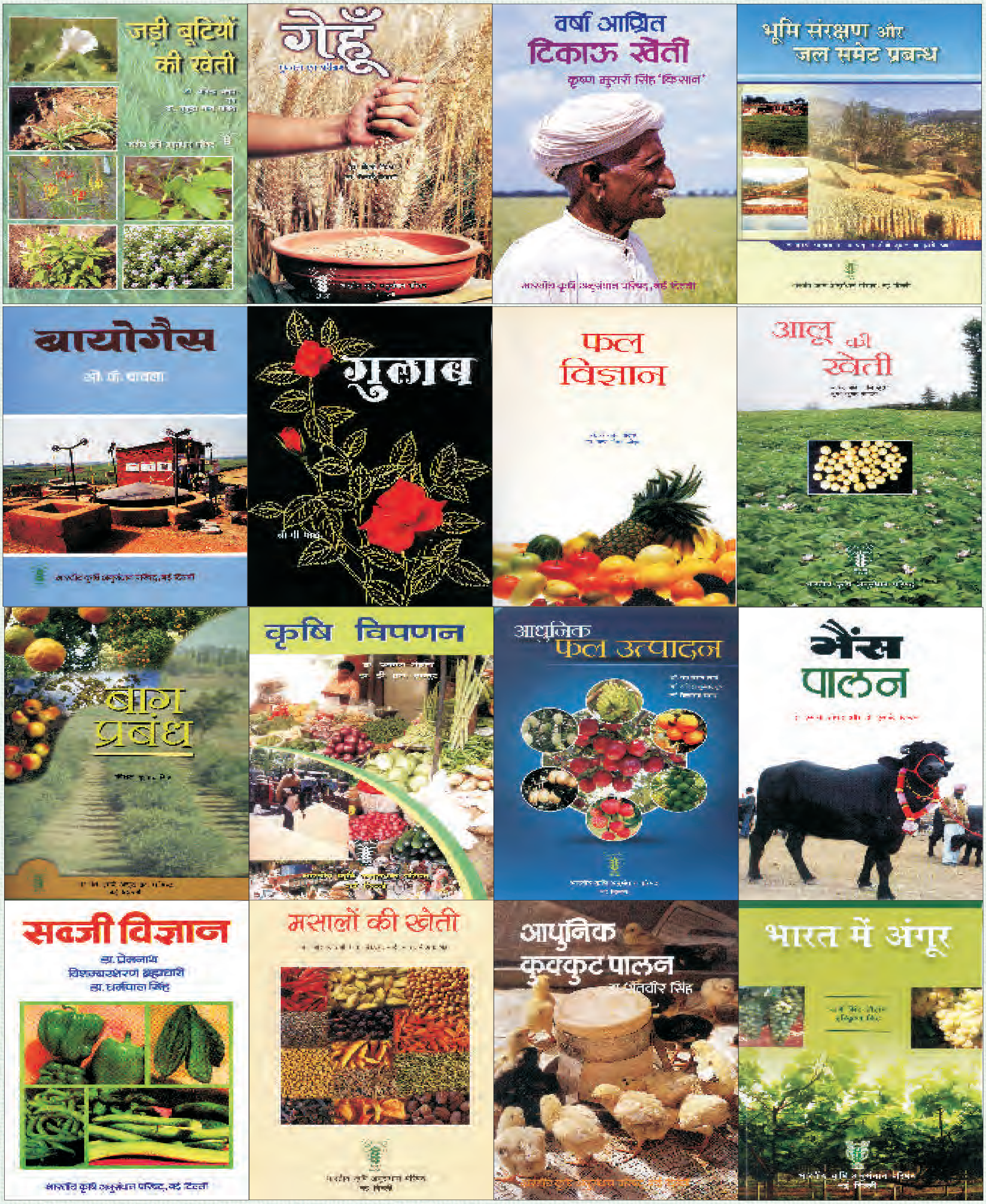

भाकृअनुप
ICAR

संपर्क सूत्रः प्रभारी, व्यवसाय एकक

कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन, पूसा, नई दिल्ली -110 012

दूरभाषः 011-25843657, E-mail: bmicar.org.in

अक्टूबर के मुख्य कृषि कार्य

राजीव कुमार सिंह, कपिला शेखावत, अंजली पटेल, एस.एस. राठौर और **ऋषभ सिंह चंदेल**

"सर्दी के मौसम का इंतजार करता अक्टूबर का महीना खेती के लिहाज से बेहद अहम है। इसी माह से धान्य फसलों जैसे-धान, मक्का, ज्वार एवं बाजरा, दलहनी फसलों जैसे-मूंग, उड़द, अरहर, लोबिया तथा ग्वार, तिलहनी फसलों जैसे-सोयाबीन, मूंगफली, तिल और अरंडी की अगेती प्रजातियों की कटाई और मड़ाई प्रारंभ हो जाती है। इसके साथ ही रबी फसलों की भी बुआई शुरू हो जाती है। इनमें तोरिया और सरसों, चना, मटर, मसूर, गेहूं, जौ, शीतकालीन मक्का, शरदकालीन गन्ना, बरसीम, जई, सब्जी, बागवानी, पुष्प एवं सुगन्धित पौधे शामिल हैं। भारतीय कृषि में रबी फसलों का महत्वपूर्ण योगदान है। आज रबी फसलों की उत्पादकता खरीफ फसलों से अधिक है। इसके प्रमुख कारण इन फसलों की उन्नत प्रजातियों, उन्नत सस्य क्रियाओं को अपनाने के अलावा रोग एवं कीटों का अपेक्षाकृत कम प्रकोप होना है। इसी के परिणामस्वरूप विगत वर्ष में रबी फसलों का रिकार्ड उत्पादन दर्ज हुआ। कृषि उत्पादन में इस वृद्धि का पूरा श्रेय किसानों की कड़ी मेहनत, कृषि वैज्ञानिकों द्वारा विकसित नई-नई तकनीकों एवं उपलब्ध संसाधनों के उचित प्रबंधन को जाता है। आइए इस महीने के खेती संबंधी खास कार्यों पर गौर करें।"

कृषि पर मौसम का सीधा असर होता है और अक्टूबर इसका सबसे अच्छा उदाहरण है। इस माह बदलता तापमान और ठंडी हवाएं नई फसलों की शुरुआत का संकेत देती हैं। इस समय किसान खरीफ की उपज से संतोष पाते हुए रबी फसलों की बुआई में जुट जाते हैं। इससे खेती का नया चक्र आरंभ होता है।

धान

- **जल प्रबंधन:** फसल की उत्पादकता बढ़ाने के लिए समुचित मात्रा में सही समय पर निश्चित जल उपलब्धता बहुत महत्वपूर्ण है। धान में फूल आते समय तथा दाने की दुग्धावस्था पर खेत में नमी बनाये रखने के लिए एक सप्ताह के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। परन्तु कटाई से 15 दिनों पूर्व सिंचाई बन्द कर दें।
- **चूहों का नियंत्रण:** धान की फसल में चूहे भी बहुत नुकसान पहुंचाते हैं। इनके नियंत्रण के लिए सभी उपलब्ध विधियां जैसे-चूहों के फंदे, विषयुक्त खाद्य, साइनो गैस उपयोग में लानी चाहिए। विषयुक्त खाद्य के सही उपयोग के लिए पहले दिन विषरहित खाद्य देना चाहिए। दूसरे दिन 19 भाग मक्का, गेहूं, चावल, एक भाग रेटॉफिन या रोडाफिन को तेल एवं चीनी के साथ मिलाकर देना चाहिए।
- एक खाद्य एक सप्ताह तक देने के बाद जिंक फॉस्फाइड मिला हुआ खाद्य 95 भाग ज्वार के दाने, 2.5 भाग जिंक फॉस्फाइड तथा इतना ही भाग सरसों का तेल मिलाकर देना चाहिए।

सस्य विज्ञान संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110012

- **कटाई:** अधिक उपज और उच्च गुणवत्ता के लिए फसल को उचित समय पर काटना आवश्यक है। कटाई का उचित समय, वातावरण, चयनित प्रजाति एवं सस्य क्रियाओं पर निर्भर करता है। धान में बालियां निकलने के लगभग 1 माह बाद धान की फसल पक जाती है।
- कटाई के लिए 80 प्रतिशत बालियों में दाने पक जाने पर अथवा दानों में जब 20 प्रतिशत नमी हो, उपयुक्त समय होता है। कटाई हंसिया या दरांती या विद्युत चालित यंत्रों की मदद से मृदा की सतह से 15-20 सें. मी. ऊपर से करनी चाहिए तथा मड़ाई हाथ से पीटकर, बैलों द्वारा या विद्युत चालित थ्रेसर से कर सकते हैं। कम्बाइन द्वारा कटाई और मड़ाई का कार्य एक साथ हो जाता है। मड़ाई के बाद दानों की सफाई कर दानों को अच्छी तरह सुखाकर (12 प्रतिशत नमी तक) ही भण्डारण करना चाहिए।

मक्का

- **कटाई:** मक्का की फसल प्रजाति के अनुसार 75 से 100 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। फसल के पकने पर भुट्टे में दानों का रंग पीला दिखाई देने लगता है और भुट्टे को ढकने वाले पत्तों का रंग भी पीला पड़ने लगता है तब पौधे की कटाई कर लेनी चाहिए। मक्का की कटाई दो बार में की जाती है। पहले इसके पौधे को काटा जाता है, उसके बाद इसके भुट्टे को पौधे से काटकर अलग किया जाता है। भुट्टे के काटने के बाद बचे भाग को सुखाकर पशुओं के चारे के रूप में उपयोग में लिया जाता है। इस समय दानों में 25-30 प्रतिशत नमी रहती है, कॉर्नशेलर से दानों को भुट्टों से अलग कर दें।

- **बेबीकॉर्न की कटाई:** अधिक गुणवत्ता वाली बेबीकॉर्न के लिए इनकी तुड़ाई रेशा (सिल्क) निकलने के 2-3 दिनों के अंतराल पर ही करें तथा स्वीटकॉर्न में रेशा निकलने के लगभग 20-22 दिनों के बाद वाली अवस्था तुड़ाई के लिए उपयुक्त है। इस समय इनमें शर्करा की मात्रा सबसे अधिक होती है।

ज्वार

- **कटाई:** ज्वार की विभिन्न प्रजातियां 100-130 दिनों में पककर तैयार हो जाती हैं। फसल पकने पर बालियों के हरे दाने सफेद या पीले रंग में बदल जाएं तथा जब दानों में नमी घटकर 20 प्रतिशत तक रह जाए, तो फसल की कटाई कर लेनी चाहिए।
- कटाई के बाद फसल को खलिहान में कम से कम एक सप्ताह तक सुखाना चाहिए। इसके बाद मड़ाई डंडों से पीटकर, बैलों द्वारा दांय चलाकर या थ्रेसर द्वारा कर लेते हैं। मड़ाई के तुरन्त बाद औसाई करके दानों को भूसे से अलग कर लिया जाता है। इसे आधुनिक सस्य विधियां अपनाकर किया जाए, तो संकर ज्वार से सिंचित दशा में 35-40 क्विंटल दाने तथा 100-120 क्विंटल कड़बी और असिंचित क्षेत्रों में 20-25 क्विंटल दाने तथा 70-80 क्विंटल कड़बी/हैक्टर प्राप्त हो जाती है।

बाजरा

- **कटाई:** बाजरे की फसल पकने के समय पौधों की पत्तियां पीले रंग की एवं सूखी हुई दिखाई देती हैं। इसके साथ ही फसल पकने के समय दाने गहरे काले रंग के हो जाते हैं। सामान्यत: बाजरे की फसल 75-85 दिनों के अन्दर पक जाती है। बाजरे की बालियां पहले काट ली जाती हैं। इसके बाद स्ट्रॉ को काटकर सुखा लेते हैं। फसल की बालियों को मड़ाई से पूर्व अच्छी तरह सुखा लेना चाहिए। बालियों से दाने अलग करने के लिए थ्रेसर का प्रयोग किया जा सकता है या बालियों को डंडों से पीटकर दानों को अलग कर सकते हैं। इसके बाद दानों को साफ करके एवं सुखाकर इनका भण्डारण किया जाता है।

सोयाबीन

तिलहनी फसलें

- **सोयाबीन:** इस फसल में जब पत्तियों का रंग पीला पड़ जाए और पत्तियां सूखकर गिरने लगें, तब फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। कटाई के बाद फसल को चार-पांच दिनों तक खेत में सुखाने के बाद बैलों की सहायता से दाना अलग कर लें। फिर दानों को 13-14 प्रतिशत नमी तक सुखाना चाहिए। उपरोक्त विधि अपनाने पर 16 क्विंटल सोयाबीन दाना तथा 25 क्विंटल सूखा भूसा साधारण ढंग से प्राप्त कर सकते हैं।
- **तिल:** तिल की पत्तियां पीली होकर गिरने लगें, तब समझना चाहिए कि फसल पककर तैयार हो चुकी है। ऐसे समय पर फसल की कटाई पौधे सहित नीचे से कर लेनी चाहिए। देरी

तिल

से कटाई करने पर फलियों के चटकने से भारी नुकसान हो सकता है। कटाई के बाद बण्डल बनाकर इन्हें खेत में ही छोटे-छोटे ढेर में खड़े कर देना चाहिए। जब पौधे सूख जाएं, तब डंडे की सहायता से पौधों को पीटकर बीज निकाल लें। दानों को अच्छी तरह साफ करने के बाद धूप में सुखाएं, ताकि दाने में नमी की मात्रा लगभग 8-10 प्रतिशत रहे।

खरीफ दलहनी फसलें

- **मूंग:** पौधों की अधिकतर फलियां पककर काली हो जाएं, तब फसल की कटाई की जा सकती है। फलियों को अधिक समय खेत में सूखा छोड़ने पर वे चटक जाती हैं और दाने बिखर जाते हैं। इससे उपज की हानि होती है। जैसे-जैसे फलियां पकती जाएं उनकी तुड़ाई करते रहें। यदि ऐसी प्रजाति है कि फलियां एक साथ पक रही हैं, तो ऐसी स्थिति में हंसिया से कटाई करें। जब फसल पूर्ण रूप से सूख जाए, तब थ्रेसर से गहाई कर सकते हैं। ध्यान रहे कि दाने में 10-12 प्रतिशत तक नमी होनी चाहिए।
- **उड़द:** इस फसल की कटाई बुआई के समय और प्रजाति पर निर्भर होती है। जैसे-जैसे फलियां पकती जाएं उनकी तुड़ाई करते रहें और यदि कोई ऐसी प्रजाति है कि फलियां एक साथ पक रही हैं, तो ऐसी स्थिति में हंसिया से कटाई करें। जब फसल पूर्ण रूप से सूख जाए, तब थ्रेसर से गहाई कर सकते हैं। ध्यान रहे कि दाने में 10-12 प्रतिशत तक नमी होनी चाहिए। उचित प्रबंधन से उत्पादित फसल से 10-15 क्विंटल/हैक्टर तक दाने की उपज आसानी से प्राप्त की जा सकती है।
- **अरहर:** इस फसल में चना फलीछेदक (हेलिकोवर्पा आर्मीजेरा) प्रमुख हानिकारक कीट है। यह कीट प्रतिवर्ष लगभग 20-30 प्रतिशत तक अरहर की फसल को हानि पहुंचाता है। इस कीट के नियंत्रण के लिए गर्मियों में खेतों की गहरी जुताई करें। अरहर की अगेती बुआई 15-20 जून एवं पछेती बुआई 15-20 जुलाई तक कर देनी चाहिए।

पूसा अरहर-16

- अरहर के साथ ज्वार की अंत:फसल लेने से चना फलीबेधक का प्रकोप कम हो जाता है। स्पाइनोसाड 45 प्रतिशत एस.जी. (0.2 मि.ली./लीटर) या इण्डोक्साकार्ब 15.8 ई.सी. (0.5 मि.ली./लीटर) या ईमामेक्टीन बेंजोएट 5 एस.जी. (0.3 ग्राम/लीटर) की दर से छिड़काव करें, या नीम का तेल (0.03 प्रतिशत) 5 मि.ली./लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
- इसके अलावा चित्तीदार फलीछेदक (मारूका विटराटा) कीट अगेती अरहर का प्रमुख हानिकारक कीट है। फसल में पुष्पण के दौरान अधिक आर्द्रता वाले क्षेत्रों में इस कीट का प्रकोप अधिक होता है। इस कीट के नियंत्रण के लिए अरहर की बुआई 15 मई से 15 जून तक करनी चाहिए। मेथोमाइल 40 एस.पी. (0.6 मि.ली./लीटर) या प्रापीनोफॉस 50 ई.सी. (2.0 मि.ली./लीटर) या डी.डी.वी.पी. 76 ई.सी. (0.5 मि.ली./लीटर) पानी के साथ सुंडियों को मारने में उपयोग होता है अथवा आवश्यकतानुसार इण्डोक्साकार्ब 14.5 एस.सी. (0.4 मि.ली./लीटर) या स्पाइनोसाड 45

मूंगफली

इस फसल में फलियां बनते समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए अन्यथा फलियों की वृद्धि की अवस्था पर सिंचाई करें। इसके साथ ही अधिक उपज और तेल की मात्रा प्राप्त करने के लिए फसल की उचित समय पर कटाई करना लाभदायक है। मूंगफली के पौधों में फूल एक साथ न आकर, गुच्छेदार प्रजातियों में दो महीनों तक एवं फैलने वाली प्रजातियों में तीन महीने तक आते रहते हैं, दोनों प्रजातियों में फलियों के विकास के लिए दो माह का समय आवश्यक है। फसल की खुदाई ऐसे समय पर ही करें जब अधिकतर फलियां पक जाएं। देर से खुदाई करने पर जिन प्रजातियों में सुषुप्तावस्था नहीं होती, वे खेत में नमी मिलने पर पुन: अंकुरण कर सकती हैं। इन प्रजातियों में पौधों से पत्तियां गिर जाती हैं तथा पौधा सूख जाता है। पौधे पीले पड़ जाएं तभी फसल की कटाई करनी चाहिए। सामान्य परिस्थितियों में अगेती एवं पछेती प्रजातियां 105 और 135 दिनों तक कट जाती हैं। फसल पक जाने के कुछ दिनों के अंतर पर खेत से कुछ पौधे उखाड़कर समय-समय पर फसल के पकने का निरीक्षण करना चाहिए। जब प्रति पौधे से अधिक से अधिक मात्रा में पूर्ण विकसित तथा परिपक्व फलियां प्राप्त हों, तभी फसल की कटाई करनी चाहिए। फलियों को तब तक सुखाना चाहिए जब तक इनमें 9-10 प्रतिशत तक नमी न रह जाए।

एस.सी. (0.2 मि.ली./लीटर) में घोलकर प्रभावित फसल पर छिड़काव करने की संस्तुति की जाती है।

- कली बनते समय कोराजेन 18.5 एस.सी. (1 मि.ली./लीटर) की दर से छिड़काव कर दें, तो इस कीट का नियंत्रण किया जा सकता है। अरहर की कुछ किस्में 5-6 महीने में तथा कुछ किस्में 10 महीनों में पककर तैयार होती हैं। अगेती किस्में नवम्बर-दिसम्बर में और पछेती किस्में मार्च-अप्रैल में काटी जाती हैं। फसल की कटाई परंपरागत कृषि यंत्रों/हंसिया/गंडासे आदि से की जाती है। फसल सूख जाने पर फलियों को काटकर या पीटकर दाने निकाले जाते हैं। यांत्रिक विधि में पूलमैन थ्रेसर का उपयोग किया जाता है।

मूंग

- **लोबिया:** लोबिया के दाने वाली फसल, उस समय काटी जाती है, जब 90 प्रतिशत फलियां पक चुकी हों। कटाई में देरी करने से उपज में हानि होती है। यदि वर्षा होने की अशंका हो, तो पहले ही फलियां तोड़ लेनी चाहिए। हरी फलियों के उपयोग के लिए फसल की फलियां 45 से 90 दिनों तक तोड़ सकते हैं। इसके बाद ये फलियां सब्जी के लिए उपयुक्त नहीं रहतीं, क्योंकि फलियों में दाना पक जाता है तथा फलियां रेशायुक्त हो जाती हैं। इसकी गहाई ट्रैक्टर या बैलों से भी की जा सकती है, लेकिन गहाई सामान्यत: हाथ से की जाती है। गहाई-मड़ाई करते समय ध्यान रखना चाहिए कि दाना टूटने न पाए। इसके लिए गहाई से पूर्व फसल को अच्छी तरह धूप में सुखा लेना चाहिए।

मटर

- **किस्मों का चयन:** भारत के विभिन्न क्षेत्रों एवं परिस्थितियों के लिए अनुमोदित मटर की उन्नत प्रजातियां जैसे-एचएफपी 715, पंजाब-89, पूसा प्रभात, पूसा पन्ना, जे.पी.-885 एवं सपना की बुआई माह के दूसरे पखवाड़े में करें।
- **बुआई:** मटर की बुआई का उपयुक्त समय अक्टूबर के अन्त से लेकर 15 नवम्बर तक होता है। मटर के छोटे दाने वाली प्रजातियों के लिए बीज दर 50-60 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर तथा बड़े दाने वाली प्रजातियों के लिए 80-90 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर पर्याप्त है।

चना

- **भूमि का चयन एवं तैयारी:** उचित जल निकास वाली मृदा जिसका पी-एच मान 6.5-7.5 के मध्य हो तथा बलुई दोमट से चिकनी दोमट मृदा दलहनी फसलों के लिए आदर्श होती है। एक गहरी जुताई के बाद हैरो तथा पाटा लगाने से बुआई हेतु खेत तैयार हो जाता है।

- **बुआई:** चने की बुआई का उचित समय उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी भारत के मैदानी क्षेत्रों में बारानी दशाओं में अक्टूबर का दूसरा पखवाड़ा तथा सिंचित दशाओं में नवम्बर का प्रथम पखवाड़ा है। छोटे दाने वाली प्रजातियों के लिए बीज दर 50-60 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर तथा मध्यम एवं बड़े दाने वाली प्रजातियों के लिए 80-85 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर उचित है। चने की बुआई पंक्तियों में करनी चाहिए तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30-45 सें.मी. होनी चाहिए। इसके साथ ही यह आवश्यक है कि बीज जमीन में लगभग 10 सें.मी. की गहराई में डाला जाए। बीज की गहराई कम करने से उकठा रोग अधिक लगता है। पछेती बुआई में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 22.5 सें.मी. रखनी चाहिए। दलहनी फसल होने के कारण चने के बीज को उचित राइजोबियम टीके से उपचार करने से लगभग 10-15 प्रतिशत अधिक उपज मिल सकती है।
- **किस्मों का चयन:** भारत के विभिन्न क्षेत्रों एवं परिस्थितियों के लिए अनुमोदित चने की उन्नत प्रजातियां जैसे-अद्विका (एनसी 7), एल 558 (जीएलके 17301), पूसा जेजी 16 (बीजीएम 10221 डीटीआईएल), कंचन (आईपीसीके 2009-145) आदि प्रमुख हैं।
- **पोषक तत्व प्रबंधन:** उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर ही किया जाना चाहिए। चने की अच्छी फसल के लिए प्रति हैक्टर 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन और 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस का उपयोग बुआई के समय करना चाहिए। गंधक की कमी वाली मृदा में 20 कि.ग्रा. गंधक प्रति हैक्टर तथा जस्ते की कमी वाली मृदा में 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर का प्रयोग लाभकारी होता है।
- **खरपतवार नियंत्रण:** खरपतवारों के रासायनिक नियंत्रण हेतु 2.5-3.0 लीटर पेण्डीमेथिलीन को 650 लीटर पानी प्रति हैक्टर की दर से घोलकर बुआई के 2-3 दिनों के अन्दर अंकुरण से पूर्व छिड़काव करने से 4-6 सप्ताह तक खरपतवार नहीं निकलते हैं। चौड़ी पत्ती तथा घास वाले खरपतवार को रासायनिक विधि से नष्ट करने के लिए एलाक्लोर की 4 लीटर या फ्लूक्लोरोलिन (45 ई.सी.) रसायन की 2.22 लीटर मात्रा को 700 लीटर पानी में मिलाकर बुआई के तुरन्त बाद या अंकुरण से पहले छिड़काव कर देना चाहिए।

- मटर की बुआई से पूर्व मृदा एवं बीजजनित कई कवक एवं जीवाणुजनित रोग है, जो अंकुरण होते समय तथा अंकुरण होने के बाद बीजों को काफी क्षति पहुंचाते हैं। बीजों के अच्छे अंकुरण तथा स्वस्थ पौधों की पर्याप्त संख्या हेतु कवकनाशी से बीज उपचार करने की सलाह दी जाती है।
- बीजजनित रोगों के नियंत्रण हेतु थीरम 75 प्रतिशत + कार्बेण्डाजिम 50 प्रतिशत (2:1) 3.0 ग्राम, अथवा ट्राइकोडर्मा 4.0 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित कर बुआई करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त मटर में मृदाजनित एवं बीजजनित रोगों के नियंत्रण हेतु जैव कवकनाशी (बायोपेस्टीसाइड) ट्राइकोडर्मा विरिडी 1 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. अथवा ट्राइकोडर्मा हारजिएनम 2 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. की 2.5 कि.ग्रा. मात्रा को प्रति हैक्टर 60-75 कि.ग्रा. सड़ी हुए गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8-10 दिनों तक छाया में रखने के उपरान्त बुआई के पूर्व आखिरी जुताई पर मृदा में मिला देना चाहिए।
- **पोषक तत्व प्रबंधन:** उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर किया जाना चाहिए। सामान्य दशाओं में मटर की फसल हेतु नाइट्रोजन 15-20 कि.ग्रा., फॉस्फोरस 40 कि.ग्रा., पोटाश 20 कि.ग्रा. तथा गंधक 20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर पर्याप्त होता है।
- मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होने पर 15-20 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर तथा 1.0-1.5 कि.ग्रा. अमोनियम मॉलिब्डेट के प्रयोग की संस्तुति की जाती है।
- **खरपतवार नियंत्रण:** एक या दो निराई-गुड़ाई पर्याप्त होती हैं। बुआई के 25-30 दिनों बाद एक निराई-गुड़ाई अवश्य कर दें। खरपतवारों के रासायनिक नियंत्रण हेतु फ्लूक्लोरालीन 45 प्रतिशत ई.सी. की 2.2 लीटर मात्रा प्रति हैक्टर लगभग 800-1000 लीटर पानी में घोलकर बुआई के तुरन्त पहले मृदा में मिलानी चाहिए अथवा पेण्डीमेथिलीन 30 प्रतिशत ई.सी. की 3.30 लीटर अथवा एलाक्लोर 50 प्रतिशत ई.सी. की 4.0 लीटर अथवा बासालिन 0.75-1.0 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टर उपरोक्तानुसार पानी में घोलकर फ्लैट फैन नॉजिल से बुआई के 2-3 दिनों के अन्दर समान रूप से छिड़काव खरपतवार नियंत्रण के लिए लाभप्रद है।

मटर

मसूर

- **बुआई:** मसूर की बुआई का उचित समय उत्तर-पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों में अक्टूबर के अन्त में तथा उत्तर-पूर्वी मैदानी क्षेत्र एवं मध्य क्षेत्र में नवम्बर का दूसरा पखवाड़ा है। पन्तनगर जीरोटिल सीडड्रिल द्वारा मसूर की बुआई अधिक लाभप्रद है। बीजजनित रोग से बचाव के लिए थीरम 2.5 ग्राम या जिंक मैंग्नीज कार्बोनेट 3.0 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीज को बोने से पूर्व उपचारित कर लेना चाहिए। इसके बाद 10 कि.ग्रा. बीज को एक पैकेट (200 ग्राम) *राइजोबियम लेग्यूमिनोसेरम* कल्चर से उपचारित करके बोना चाहिए, विशेषकर उन खेतों में जिनमें पहले मसूर न बोई गयी हो। इसके अतिरिक्त फॉस्फेट घुलनशीनल बैक्टीरिया संवर्धन का प्रयोग पौधों को फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ाता है। मसूर के बड़े दाने वाली प्रजातियों के लिए बीज दर 55-60 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर तथा छोटे दानों वाली प्रजातियों के लिए बीज दर 40-45 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर उचित है।

- **उन्नत प्रजातियां:** एलएल 1613, आईपीएल 230, पंत मसूर 12 (पीएल 245), वीएल मसूर 150 (वीएल 150), पूसा अगेती, पूसा वैभव, प्रिया एवं शेरी आदि मसूर की उन्नत प्रजातियों की बुआई करें।
- **पोषक तत्व प्रबंधन:** मसूर की फसल में उर्वरक का प्रयोग मृदा परीक्षण की सिफारिश के आधार पर करना चाहिए। मसूर की बुआई से पूर्व 15-20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 20 कि.ग्रा. पोटाश तथा 20 कि.ग्रा. गंधक प्रति हैक्टर की दर संस्तुत की गई है। यदि डीएपी उपलब्ध है, तो इसके 100 कि.ग्रा. तथा सल्फर 20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर तत्व का प्रयोग करें। सल्फर की पूर्ति 200 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर जिप्सम से भी की जा सकती है। यदि मृदा में नमी कम है तो खाद की मात्रा कम कर देनी चाहिए।

तोरिया और सरसों

- **किस्मों का चयन:** सिंचित क्षेत्र में समय से बुआई (अक्टूबर) के लिए उन्नत प्रजातियां जैसे-पूसा सरसों 21, पूसा सरसों 22, पूसा

सरसों-24, पूसा सरसों-25, पूसा सरसों-26, पूसा सरसों-27, पूसा सरसों-29, पूसा सरसों-30 एवं **संकर प्रजाति** एन.आर.सी.एच.बी. 506, कोरल-432, कोरल-437, पी.ए.सी. 432, आरएलसी-3 एवं **सिंचित पछेती बुआई** के लिए उन्नत प्रजातियां जैसे-पूसा सरसों 28, आर.जी.एन. 145, नव गोल्ड एवं **क्षारीय एवं लवणीय मृदा** के लिए प्रजातियां जैसे-सी.एस. 56, सी.एस. 54, सी. एस. 52, सीएस-58, सीएस-60, आदि उन्नत प्रजातियां हैं।

- पीली सरसों की उन्नत प्रजातियां जैसे-पंत श्वेता, पंत गिरिजा, **तोरिया** की उन्नत प्रजातियां जैसे-पीतांबरी, उत्तरा, सुश्री, पंत हिल तोरिया-1, पंत तोरिया-508, **भूरी सरसों** की उन्नत प्रजातियां जैसे-एचपीबीएस-1, शालीमार सरों-2, शालीमार सरों-3, **तारामीरा** की उन्नत प्रजातियां जैसे-वल्लभ तारामीरा-1 (पुट 93-11), जोबनेर तारा (आरटीएम-1351), ज्वाला तारा (आरटीएम-1355) एवं **गोभी सरसों** की उन्नत प्रजातियां जैसे-आरएसपीएन-25, जीएससी-7, ओएनके-1 उपयुक्त हैं।
- **बुआई:** तोरिया और सरसों की बुआई का उचित समय उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी भारत के मैदानी क्षेत्रों में बारानी दशाओं में अक्टूबर का दूसरा पखवाड़ा तथा सिंचित दशाओं में नवम्बर का प्रथम पखवाड़ा उपयुक्त है। बीजजनित रोगों से सुरक्षा हेतु फफूंदनाशक दवा बाविस्टीन 2 ग्राम, एपरॉन 6 ग्राम, कैप्टॉन 2 ग्राम या थीरम 2.5 ग्राम नामक रसायन से प्रति कि.ग्रा. बीज का उपचार अवश्य करें। बीज दर 3-4 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर एवं पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30-45 सें.मी. एवं पौधे से पौधे की दूरी 10-15 सें.मी. एवं बीज की गहराई 2.5-3.0 सें.मी. रखें।
- **पोषक तत्व प्रबंधन:** खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर किया जाना चाहिए। फसल में बुआई से पूर्व 15-20 टन प्रति हैक्टर सड़ी गोबर की खाद तथा उर्वरकों के रूप में 80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 40 कि.ग्रा. पोटाश तथा 30 कि.ग्रा. सल्फर की मात्रा प्रति हैक्टर प्रयोग करनी चाहिए। फॉस्फोरस, पोटाश, सल्फर की पूरी मात्रा तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा बुआई के समय प्रयोग करनी चाहिए।

तोरिया

- बुआई के 30-35 दिनों बाद 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रथम सिंचाई के समय प्रयोग करना चाहिए। वहीं 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर का प्रयोग भी लाभदायक है। खड़ी फसल में जिंक की कमी दिखाई दे, तो 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट का घोल बनाकर छिड़काव करने से बीज की गुणवत्ता एवं मात्रा में वृद्धि होती है। फूल आने के समय मल्टीप्लेक्स या एग्रेमिन 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करने से परागण पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।
- **खरपतवार नियंत्रण:** बुआई के 20-22 दिनों के अन्दर निराई-गुड़ाई के साथ सघन पौधों को निकालकर पौधे से पौधे की दूरी 10-15 सें.मी. कर देनी चाहिए, ताकि पौधों की बढ़वार अच्छी तरह हो सके। खरपतवारों से मुक्त रखने के लिए 20-25 दिनों में एक बार निराई-गुड़ाई करना आवश्यक है। रसायनों द्वारा खरपतवार नियंत्रण करने हेतु बासालीन (फ्लूक्लोरालिन 45 ई.सी.) 2.2 लीटर दवा 800 लीटर पानी प्रति हैक्टर की दर से अन्तिम जुताई से पहले छिड़काव कर तुरन्त जुताई करें एवं पाटा लगा दें अथवा पेण्डिमेथिलीन 30 ई.सी. (स्टॉम्प-30) 3.3 लीटर दवा 800 लीटर पानी प्रति हैक्टर की दर से बुआई के तुरन्त बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व (1-2 दिनों के अन्दर) छिड़काव करें।
- **जल प्रबंधन एवं अंत:फसल:** अगेती सरसों में सामान्यत: दो सिंचाई पर्याप्त रहती हैं। प्रथम सिंचाई बुआई के 30-35 दिनों बाद तथा दूसरी सिंचाई फलियों में बीज बनने की अवस्था पर सूखे की स्थिति में करनी चाहिए। आलू के साथ मिलवां फसल के लिए आलू की तीन पंक्तियों के बीच राई की एक पंक्ति की बुआई करें।

जौ

- **बुआई:** असिंचित क्षेत्रों में 20 अक्टूबर से 10 नवंबर तक जौ की बुआई करनी चाहिए, जबकि सिंचित क्षेत्रों में 25 नवंबर तक बुआई कर देनी चाहिए तथा पछेती जौ की बुआई 15 दिसंबर तक कर देनी चाहिए। जौ के लिए 80-100 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त है।
- जौ की बुआई हल के पीछे कूड़ों में अथवा सीडड्रिल से 20-25 सें.मी. पंक्ति से पंक्ति की दूरी पर 5-6 सें.मी. गहराई पर बोएं। असिंचित दशा में 6-8 सें.मी. गहराई में बुआई करें। बीजजनित रोगों के नियंत्रण के लिए बीज उपचार आवश्यक है।
- **किस्मों का चयन:** असिंचित एवं सिंचित क्षेत्रों के लिए जौ की छिलके वाली उन्नत प्रजातियां जैसे-अंबर, ज्योति, आजाद, के 141, आर.डी. 2035, आर.डी. 2052 तथा **बिना छिलके** वाली उन्नत प्रजातियां जैसे-गीतांजलि

(के 1149), डीलमा, नरेंद्र जौ 4 (एनडीबी 943), **ऊसरीली मृदा** के लिए आजाद, के. 141, जे.बी. 58, आर.डी. 2715, आर.डी. 2786, **लवणीय एवं क्षारीय मृदा** के लिए एन.डी.बी. 1173, आर.डी. 2552, आर.डी. 2794, नरेन्द्र जौ-1, नरेन्द्र जौ-3; **माल्ट एवं बीयर** के लिए उन्नत प्रजातियां जैसे-प्रगति, ऋतंभरा, डी.एल. 88 (6 धारीय), आर.डी. 2715, डी.डब्ल्यूआर 28 एवं रेखा (2 धारीय) एवं डी.डब्ल्यू.आर. 28 तथा **अन्य प्रजातियां** जैसे-डी.डब्ल्यू. आर.बी.91, डी.डब्ल्यू.आर.यू.बी. 52, बी.एच. 393 आदि प्रमुख हैं।

- **पोषक तत्व प्रबंधन:** उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर ही करना उचित है। असिंचित दशा हेतु एक हैक्टर में 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग करें। सिंचित एवं समय से बुआई हेतु प्रति हैक्टर 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश एवं **माल्ट प्रजातियों** हेतु 80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश प्रयोग करें। ऊसर एवं विलम्ब से बुआई की दशा में नाइट्रोजन 30 कि.ग्रा., फॉस्फेट 20 कि.ग्रा. तथा जिंक सल्फेट 20-25 कि.ग्रा./हैक्टर प्रयोग करें।

गेहूं

- **बुआई:** असिंचित/बारानी तथा सीमित सिंचाई एवं समय से गेहूं की बुआई अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह से प्रारम्भ कर दें। गेहूं की बुआई के लिए दिन का औसत तापमान 21-25 डिग्री सेन्टीग्रेड होना चाहिए। यह गेहूं में दाने की चमक, आकार, स्वाद, और उच्च बाजार भाव के लिए उपयुक्त है। गेहूं की प्रति हैक्टर बुआई के लिए 125 कि.ग्रा. बीज एवं पंक्ति से पंक्ति की दूरी 22.5 सें.मी. तथा बीज की गहराई 5-7 सें.मी. रखनी चाहिए।

- **किस्मों का चयन:** हमेशा उन्नत, नई तथा क्षेत्र विशेष के लिए संस्तुत प्रजातियों का चयन करना चाहिए। असिंचित/बारानी तथा सीमित सिंचाई एवं समय से बुआई के लिए गेहूं की उन्नत प्रजातियां जैसे-एच.आई. 1531, एच.आई. 8627, एच.आई. 1500, मालवीय-533 एच.डी.-3338 एवं अमर उपयुक्त हैं।
- **पोषक तत्व प्रबंधन:** उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर ही करना उचित है। असिंचित/बारानी तथा सीमित सिंचाई एवं समय से बुआई के लिए 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग करें।
- **खरपतवार नियंत्रण:** गेहूं बोने के तीन दिनों के अन्दर पेण्डिमेथिलीन की 1000 मि.ली. प्रति हैक्टर मात्रा को 500 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करने से चौड़ी पत्ती एवं घासवर्गीय खरपतवार नियंत्रित हो जाते हैं। मेट्रिब्युजिन की 175 ग्राम मात्रा प्रति हैक्टर की दर से 500 लीटर पानी में घोलकर बोने के 25-30 दिनों बाद प्रयोग करें अथवा सल्फोसल्फ्यूरॉन की 25 ग्राम मात्रा 250-300 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर में छिड़काव करें अथवा 25 ग्राम सल्फोसल्फ्यूरॉन + 4 ग्राम मेटसल्फ्यूरॉन मिथाइल को 250-300 लीटर पानी में घोलकर एक हैक्टर में प्रयोग करें। रसायनों का छिड़काव धूप वाले दिन, जब हवा की गति बहुत कम हो, तभी करें।

शीतकालीन मक्का

- **बुआई:** जहां सिंचाई के साधन उपलब्ध हैं, वहां रबी की अगेती फसल के रूप में मक्का की खेती की जा सकती है। मक्का की खेती विभिन्न प्रकार की मृदा में सफलतापूर्वक की जा सकती है। उचित जल निकास युक्त बलुई मटियार से दोमट मृदा, जिसमें वायु संचार एवं पानी के निकास की उत्तम व्यवस्था हो तथा पी-एच मान 6.5 से 7.5 के बीच में हो, मक्का फसल सफलतापूर्वक उगाई जा सकती है।

शीतकालीन मक्का

- जिस जमीन में खारे पानी की समस्या है, वहां मक्का की बिजाई मेड़ के ऊपर के बजाय साइड में करें। इससे जड़ें नमक से प्रभावित नहीं हो पाएंगी। सिंचाई की समुचित व्यवस्था होने पर मक्का की बुआई अक्टूबर के अन्त में की जा सकती है। संकर प्रजातियों के लिए 18-20 कि.ग्रा. एवं संकुल प्रजातियों के लिए 20-25 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 सें.मी. तथा पौधों की दूरी 18-20 सें.मी. रखें।
- **किस्मों का चयन:** समय से बुआई के लिए संकर और संकुल मक्का की उपयुक्त प्रजातियां जैसे शक्तिमान-1, गंगा-11, दक्कन-103, दक्कन-104, त्रिशूलता एक्स-1382, के.एच. 5081, के.एच. 5991, सीडटेक 2324, धवल, शरदमणी एवं शक्ति-1 उपयुक्त हैं।

- **पोषक तत्व प्रबंधन:** बुआई से 10-15 दिनों पूर्व खेत में भली-भांति सड़ी हुई 10-12 टन गोबर की खाद प्रति हैक्टर मिला देनी चाहिए तथा 150 से 180 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60-70 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 60-70 कि.ग्रा. पोटाश तथा 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट का प्रयोग किया जाना चाहिए। संकुल मक्का के लिए 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 40 कि.ग्रा. पोटाश एवं 30 कि.ग्रा. गंधक प्रति हैक्टर प्रयोग करें। फॉस्फोरस, पोटाश और जिंक की पूरी मात्रा तथा 50 प्रतिशत नाइट्रोजन की आधार मात्रा के रूप में बुआई के समय देनी चाहिए।

बरसीम

- **बुआई:** बरसीम की भरपूर उपज के लिए बुआई अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में करनी चाहिए। समय से पहले बुआई पर अधिक तापमान के कारण अंकुरण और जमाव कम होता है तथा खरपतवार अधिक उगते हैं। जबकि देर से बुआई करने पर कम तापमान के कारण पौधों का विकास प्रभावित होता है।
- बुआई से पहले राइजोबियम कल्चर को 250 ग्राम गुड़ के घोल में मिलाकर 10 कि.ग्रा. बीज पर कोट करें और इसे छायादार स्थान पर सुखाकर बुआई करें। दलहनी फसल होने के कारण बरसीम की जड़ों में राइजोबियम जीवाणु वायुमंडलीय नाइट्रोजन का उपयोग कर पौधों को नाइट्रोजन प्रदान करते हैं। अधिक हरा चारा उत्पादन के लिए 25-30 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त होता है, जबकि देर से बुआई के लिए इसे 5 कि.ग्रा. अधिक बोना चाहिए।

बरसीम

- **किस्मों का चयन:** उन्नत प्रजातियों में वी.एल.-44, आई.जी.एफ.आर.-एस. -99-1, हिसार बरसीम-1, जवाहर बरसीम-5, वी.एल.-2, वी.एल.-1, वी.एल.-22, यू.पी.वी. 110 तथा यू.पी. वी. 103 आदि प्रमुख हैं।
- **पोषक तत्व प्रबंधन:** इसके लिए बुआई से एक माह पूर्व अगस्त में 10-15 टन गोबर की खाद प्रति हैक्टर डालकर मिट्टी में मिलाएं तथा बुआई के समय 20-30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन और 50-60

शरदकालीन गन्ना

- **गन्ना बीज का चयन:** गन्ना बीज के लिए 9-10 माह की उम्र का गन्ना ही उपयोग करें। गन्ना बीज उन्नत प्रजाति, मोटा, ठोस, शुद्ध एवं रोगरहित होना चाहिए। इसके साथ ही गन्ना बीज की आंख पूर्ण विकसित तथा फूली हुई होनी चाहिए। शरद-कालीन गन्ने की बुआई के लिए अक्टूबर का पहला पखवाड़ा उपयुक्त है। बुआई के लिए पिछले वर्ष शरद ऋतु में बोये गये गन्ने के बीज लेना अच्छा रहेगा।

- **किस्मों का चयन:** गन्ने की शीघ्र पकने वाली उन्नत प्रजातियां जैसे-को. एल.के.-14201, सी.ओ. 16034, सी. ओ. 17018, सी.ओ. 15023, सी.ओ. 17018 तथा **मध्यम या देर** से पकने वाली प्रजातियां में को.शा.-767, को.शा.-8432, को.शा.-88216, को.शा.-97264, को.शा.-96275 एवं पन्त-84212 आदि प्रमुख हैं।
- **बुआई:** शुद्ध फसल में गन्ने की बुआई 75 सें.मी. तथा आलू, राई, चना, सरसों के साथ मिश्रित फसल में 90 सें.मी. की दूरी पर करें। गन्ने का एक आंख वाला टुकड़ा लगाने पर प्रति एकड़ 10 क्विंटल बीज की आवश्यकता होती है। वहीं 2 आंख के टुकड़े लगाने पर 20 क्विंटल बीज की आवश्यकता होती है। वहीं 205 ग्राम एरीटॉन या 500 ग्राम एगलॉल को 100 लीटर पानी में घोलकर उसमें लगभग 25 क्विंटल गन्ना के बीज के टुकड़े को उपचारित किया जा सकता है। जैविक उपचार (प्रति एकड़) 1 लीटर एजोटोबैक्टर + एक लीटर पी.एस.बी. का 100 लीटर पानी में घोल बनाकर रासायनिक बीज उपचार के बाद बीज के टुकड़ों को सुखाएं। इसके बाद उपरोक्त घोल में 30 मिनटों तक डुबोकर उपचार करने के बाद बुआई करें।
- **पोषक तत्व प्रबंधन:** बुआई के पहले खेत की तैयारी के समय ट्राइकोडर्मा मिला हुआ प्रेसमड/गोबर की खाद (10 टन प्रति हैक्टर) का प्रयोग अवश्य करें। यदि मृदा परीक्षण नहीं हुआ हो, तो बुआई के समय प्रति हैक्टर 60-75 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60-80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 20-40 कि.ग्रा. पोटाश एवं 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट का प्रयोग करें।
- **पौध संरक्षण:** दीमक, अंकुरबेधक और जड़बेधक कीटों के नियंत्रण हेतु क्लोरोपाइरीफॉस (20 ई.सी.) 6.25 लीटर प्रति हैक्टर या क्लोरेन्ट्रेनिलिप्रोल (18.5 एस.सी.) 500-600 मि.ली. प्रति हैक्टर का 1500-1600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। अथवा फोरेट-10 जी की 20 कि.ग्रा. मात्रा गन्ने के बीज के ऊपर डालकर कूड़ों को पटेला से अच्छी तरह ढक दें। यदि मृदा का पी-एच मान 7.5 से ज्यादा हो तो इमिडाक्लोप्रिड (1.8 एस.आई) 500 मि.ली. प्रति हैक्टर का 1500-1600 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

कि.ग्रा. फॉस्फोरस अंतिम जुताई में खेत में मिलाकर बुआई करें।

- **मिश्रित फसलः** प्रथम कटाई में अच्छी उपज के लिए जौ, जई या सरसों के बीज को मिलाकर बुआई करनी चाहिए। इसके लिए 30-40 कि.ग्रा. जौ या जई अथवा 2 कि.ग्रा. सरसों को बरसीम की बुआई से पूर्व खेत में छिड़ककर हल या ट्रैक्टर से मिट्टी में मिलाएं और फिर बरसीम की बुआई करें।

जई

- **जई की उन्नत प्रजातियांः** ओ.एल.-15, एन.पी.-1, एन.पी.-2,-एन.पी.-1 हाइब्रिड, एन.पी.-3 हाइब्रिड, एन.पी.-27 हाइब्रिड आदि पुरानी किस्में हैं, लेकिन आजकल कैंट, एफ.ओ.एस.-1, यू.पी. ओ.-13, यू.पी. ओ.-50, यू.पी.ओ.-94, यू.पी.ओ.-92, यू.पी.ओ.-123, यू.पी.आ.-160, चौड़ी पत्ती पालमपुर-1, हरियाणा जई-114, एच.एफ.ओ.-114, कैंट, अल्जीरियन आदि किस्में लोकप्रिय हैं।

जई

- **बुआईः** बीज दर बुआई की विधि पर निर्भर करती है। इसके अलावा मृदा की किस्म, मृदा की उर्वरता एवं बुआई का समय इससे सीधा संबंध रखते हैं। आमतौर पर 80-100 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पंक्तियों में डाला जाता है। देसी हल द्वारा 20 सें.मी. की दूरी पर बुआई कर देते हैं।
- जई की बुआई अक्टूबर से ही प्रारंभ कर दी जाती है, जो दिसंबर तक चलती है। अक्टूबर में की गई बुआई अच्छी मानी जाती है। साथ ही शीघ्र की गई बुआई में कटाइयों की संख्या में वृद्धि हो जाती है, जबकि अखिल भारतीय समन्वित चारा अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत हुए बुआई के समय पर प्रयोगों से स्पष्ट है कि जई की अधिकतम उपज के लिए 15 नवम्बर के लगभग बुआई अच्छी रहती है, जबकि देर से बुआई करने से उपज में कमी आ जाती है।

सब्जी फसलें

- **पत्तागोभीः** पत्तागोभी को फूलगोभी की अपेक्षा अधिक ठंड की आवश्यकता होती है और 600 फारेनहाइट पर अच्छी उपज प्राप्त होती है। शीघ्र तैयार होने वाली पत्तागोभी अनेक प्रकार की मृदा में उगाई जा सकती है। शीघ्र तैयार होने वाली किस्मों के लिए बलुई दोमट तथा देर से तैयार होने वाली किस्मों के लिए कछारी दोमट सर्वोत्तम होती है। मृदा का पी-एच मान 5.8 से 6.8 होना चाहिए।
- बन्दगोभी की मध्यावधि एवं पछेती किस्में लाल पत्तागोभी, पूसा मुक्ता, गोल्डन एकड़, पूसा ड्रम हैड, पूसा बन्दगोभी संकर-1 पूसा अगेती की

सब्जी मटर

सब्जी मटर की बुआई के लिए अक्टूबर का प्रथम पखवाड़ा उपयुक्त है। मटर की उन्नत किस्में जैसे पूसा प्रबल, पूसा श्री, पूसा प्रगति, अर्केल, पंजाब अगेती-6 एवं वीपी 434 की बुआई करें। सब्जी मटर की अगेती किस्मों के लिए प्रति हैक्टर में बुआई करने के लिए 120-150 कि.ग्रा. तथा **मध्यम** एवं **पछेती किस्मों** के लिए 80-100 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त होता है। बुआई से पूर्व बीज उपचार अवश्य करें। एक हैक्टर खेत में मटर की बुआई के लिए 200 क्विंटल सड़ी गोबर की खाद, 50 कि.ग्रा. यूरिया, 3 क्विंटल सुपर फॉस्फेट, 65 कि.ग्रा. पोटाश बुआई से पूर्व खेत में मिला दें। खेत की तैयारी के समय 20-25 टन गोबर की खाद, नाइट्रोजन 40 कि.ग्रा., फॉस्फोरस 60 कि.ग्रा. एवं पोटाश 50 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से प्रयोग करें। मटर का तना छेदक (स्टेम वीविल) की रोकथाम हेतु बुआई के समय फोरेट 10जी का 10 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से बुआई के समय मृदा में मिला दें।

फूलगोभी

फूलगोभी की अगेती एवं पछेती फसल के लिए अच्छी जल निकास वाली क्रमशः बलुई दोमट और दोमट/चिकनी मृदा अच्छी होती हैं। खेत की तैयारी भलीभांति जुताई करके एवं पाटा चलाकर करनी चाहिए। पछेती फूलगोभी की किस्में जैसे-केटीएच-301, पूसा स्नोबॉल-1, पूसा स्नोबॉल-2 एवं **ब्रोकली** की प्रजाति पूसा के.टी.एस.-1, पालम समृद्धि, बेलस्टार, केलाब्रेसी के बीज की बुआई पौधशाला में कर दें। पूसा स्नोबॉल-2 की रोपाई 15 अक्टूबर के बाद कर सकते हैं। फूलगोभी की अगेती फसल की अपेक्षा पछेती फसलों में खाद एवं उर्वरकों की अधिक आवश्यकता होती हैं। फूलगोभी की अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए प्रति हैक्टर 300 क्विंटल गोबर की खाद, 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 60 कि.ग्रा. पोटाश की आवश्यकता होती है। गोबर की खाद को रोपाई से पूर्व खेत में डालकर भलीभांति मिला देना चाहिए। फूलगोभी के खेत में उथली गुड़ाई करते रहें, ताकि खरपतवार नष्ट हों और पौधों की जड़ें सुरक्षित रहें। गहरी गुड़ाई न करें, क्योंकि इससे जड़ें कट सकती हैं। पहली गुड़ाई पौधे मिट्टी में जमते ही करनी चाहिए और पौध लगाने के 6 सप्ताह बाद पौधों पर मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए।

लाल बंदगोभी

नर्सरी में बुआई पूरे अक्टूबर करते हैं तथा इनकी रोपाई मध्य अक्टूबर से प्रारंभ की जा सकती है।

- **गांठगोभी:** गांठगोभी की प्रजाति पूसा विराट, व्हाइट वियना की रोपाई पूरे माह 30×20 सें.मी. के अंतराल पर करें। रोपाई के 25-30 दिनों बाद प्रति हैक्टर मध्यवर्गीय फूलगोभी में 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन एवं बन्दगोभी में 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन की पहली टॉप ड्रेसिंग कर दें।
- **आलू:** तापमान और जलवायु आलू के उत्पादन को प्रभावित करने वाले मुख्य कारक हैं। आलू के अच्छे अंकुरण के लिए 24-25 डिग्री और उत्पादन तथा वानस्पतिक वृद्धि हेतु 18-20 डिग्री सेल्सियस का औसत तापमान अनुकूल होता है, जबकि कंद निर्माण के लिए 17-20 डिग्री सेल्सियस आवश्यक है। आलू की फसल विभिन्न जलवायु क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगाई जा सकती है।
- बुआई से पहले बीज कंद को कोल्ड स्टोरेज से निकालकर 10-15 दिनों तक छायादार स्थान पर रखें और सड़े या अंकुरित न हुए कंद अलग कर दें। आलू की **अल्प अवधि वाली किस्में:** कुफरी नीलकंठ, कुफरी सह्याद्रि, कुफरी करन, कुफरी ख्याति, कुफरी लवकार, कुफरी चन्द्रमुखी की बुआई 10 अक्टूबर तक तथा **मध्यम अवधि किस्में:** कुफरी ज्योति, कुफरी चिप्सोना-1, कुफरी चिप्सोना-3, कुफरी चिप्सोना-4, कुफरी फ्राइसोना एवं **मध्यम-दीर्घ अवधि** किस्में: कुफरी हिमसोना, कुफरी सिन्दूरी, कुफरी शीतमान, कुफरी स्वर्ण एवं कुफरी गिरिराज आदि की बुआई 15-25 अक्टूबर तक अवश्य करें।
- **जैव संवर्धित आलू की नई प्रजाति कुफरी जामुनिया:** कुफरी जामुनिया एक मध्यम अवधि एवं अधिक उपज देने वाली नई उन्नत प्रजाति है। यह बुआई से लेकर कटाई तक लगभग 90 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 320-350 क्विंटल प्रति हैक्टर है। यह प्रजाति जैव संवर्धित है, इसमें पोषण की मात्रा ज्यादा है। विशेष रूप से, एंथोसायनिन उच्च मात्रा में होता है, जो इसके जीवंत बैंगनी गूदे में पाया जाने वाले शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट है।
- **लहसुन:** भीमा ओंकार, भीम पर्पल, वीएल लहसुन 1, वीएल लहसुन 2, एग्री फाउण्ड व्हाइट, जी-1, भीम पर्पल, वीएल लहसुन 1, जी-50 (बैंगनी धब्बा एवं झुलसा रोग सहनशील), जी-282, गोदावरी एवं श्वेता तथा पूना लहसुन की प्रमुख किस्मों की बुआई करें।
- लहसुन की अच्छी पैदावार लेने के लिए एक हैक्टर में 300 क्विंटल सड़ी गोबर की खाद रोपाई से एक सप्ताह पहले मृदा में मिला दें तथा बुआई के समय अन्तिम जुताई पर 100 कि.ग्रा. यूरिया, 300 कि.ग्रा. सुपर फॉस्फेट एवं 100 कि.ग्रा. पोटाश अच्छी तरह खेत में मिला दें।
- एक हैक्टर क्षेत्र में लहसुन का 5-6 क्विंटल बीज (कलियां) पर्याप्त हैं। खेत में बुआई पंक्तियों में 15×10 सें.मी. की दूरी पर करने के बाद 2 सें.मी. गहरी मिट्टी की तह से ढक दें। लहसुन में खरपतवार नियंत्रण हेतु पेण्डीमेथिलीन 1.25 कि.ग्रा. अथवा फ्लूक्लोरोलीन 1.25 कि.ग्रा. प्रति

कुफरी जामुनिया

टमाटर

रबी में टमाटर की बुआई के लिए अक्टूबर माह उपयुक्त है। टमाटर की उन्नत किस्में जैसे-पूसा रोहिणी, पूसा सदाबहार, पूसा हाइब्रिड 1 आदि प्रमुख किस्मों की बुआई करें। टमाटर की बीज दर उन्नत प्रजातियों हेतु 400-500 ग्राम प्रति हैक्टर, संकर किस्मों हेतु 150-200 ग्राम प्रति हैक्टर पर्याप्त है। टमाटर की सीमित बढ़वार वाली किस्मों की रोपाई 60×60 सें.मी. तथा असीमित बढ़वार वाली किस्मों की रोपाई 75-90×60 सें.मी. पर करें। टमाटर की रोपाई के समय उन्नत प्रजातियों के लिए प्रति हैक्टर 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 50 कि.ग्रा. फॉस्फेट एवं 60-80 कि.ग्रा. पोटाश एवं जिंक और बोरॉन की कमी होने पर 20-25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट एवं 8-12 कि.ग्रा. बोरेक्स का प्रयोग करें। संकर/असीमित बढ़वार वाली किस्मों के लिए प्रति हैक्टर 55-50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन का प्रयोग करें।

लहसुन

हैक्टर की दर से 650 लीटर पानी में घोलकर बुआई के 8-10 दिनों बाद छिड़काव करें।

- **प्याजः** प्याज को विभिन्न प्रकार की मृदा में उगाया जा सकता है। अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए दोमट या बुलई दोमट मृदा, जिसमें जीवाश्म

प्याज

पदार्थ की प्रचुर मात्रा एवं जल निकास की उत्तम व्यवस्था हो। साथ ही मृदा का पी-एच मान सामान्य (6.5-7.5) हो, सर्वोत्तम माना जाता है। प्याज की प्रजाति पूसा माधवी, पूसा रेड, पूसा रिद्धि, भीमा लाइट रेड, भीमा डार्क रेड, भीमा रेड एवं **हरी प्याज** की प्रजाति पूसा सौम्या की रोपाई करें। रबी प्याज की बीज दर उन्नत प्रजातियों हेतु 8-10 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर पर्याप्त है।

- रबी प्याज में खाद एवं उर्वरक की मात्रा, जलवायु और मृदा के प्रकार पर निर्भर करती है। अच्छी फसल लेने के लिए 20-25 टन अच्छी सड़ी गोबर खाद प्रति हैक्टर की दर से खेत की अंतिम तैयारी के समय मिला दें। इसके अलावा 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 50 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से डालें।
- नाइट्रोजन की आधी मात्रा और फॉस्फोरस एवं पोटाश की संपूर्ण मात्रा रोपाई के पहले खेत में मिला दें। नाइट्रोजन की शेष मात्रा को 2 बराबर भागों में बांटकर रोपाई के 30 दिनों तथा 45 दिनों बाद छिड़ककर दें।
- इसके अतिरिक्त 50 कि.ग्रा. सल्फर एवं 5 कि.ग्रा. जिंक प्रति हैक्टर की दर से रोपाई के पूर्व डालना भी उपयुक्त रहेगा। खेत में पौध रोपाई से पूर्व पौध की जड़ों को बाविस्टीन दवा की 2 ग्राम मात्रा को 1 लीटर पानी के घोल में 15-20 मिनट डुबोकर रोपाई करें, ताकि फसल को बैंगनी धब्बा रोग से बचाया जा सके। रोपाई करते समय पंक्ति से पंक्ति के बीच की दूरी 20 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सें.मी. रखें। इस प्रकार एक हैक्टर में 5 लाख पौधे रहेंगे।
- **गाजरः** इसकी उन्नत किस्म जैसे-पूसा वृष्टि, पूसा रुधिरा, पूसा आसिता, पूसा मेघाली, पूसा यमदग्नि एवं **संकर** प्रजाति पूसा वसुधा, पूसा नयन ज्योति की बुआई करें और प्रति हैक्टर 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फेट

गाजर

एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग करें। मूली की प्रजाति पूसा मृदुला, पूसा देसी, आदि की बुआई करें।

- **शिमला मिर्चः** शिमला मिर्च जैसे पूसा दीप्ति, पूसा मेघदूत, अर्का मोहिनी, अर्का अतुल्या, अर्का बसंत, अर्का गौरव, इंद्र प्रजाति की रोपाई 15 अक्टूबर के बाद कर सकते हैं। शिमला

शिमला मिर्च

मिर्च में रोपाई के 20 दिनों बाद प्रथम एवं 40 दिनों बाद द्वितीय प्रति हैक्टर 25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (54 कि.ग्रा. यूरिया) की टॉप ड्रेसिंग करनी चाहिए।

- **अन्य सब्जियांः** रबी की अन्य सब्जियां, पालक, मेथी, गाजर, मूली, धनिया की बुआई पंक्तियों में करें। प्रति हैक्टर बुआई के लिए पालक एवं मेथी 25-30 कि.ग्रा., गाजर 6-8 कि.ग्रा., मूली 8-10 कि.ग्रा. तथा धनिया 15-30 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। मेथी की प्रजाति जैसे पूसा अर्ली बंचिंग

पालक

एवं पूसा कसूरी की बुआई करें। पालक की प्रजाति जैस-ऑलग्रीन, पूसा ज्योति, पूसा हरित, पूसा भारती एवं जोबनेर ग्रीन की बुआई करें। 25-30 टन गोबर की खाद तथा 80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 50 कि.ग्रा. पोटाश/हैक्टर का प्रयोग करें।

बागवानी फसलें

- आम में गुच्छा रोग से बचाव हेतु अक्टूबर के महीने में 200 पी.पी.एम. नेप्थालीन एसिटिक अम्ल का छिड़काव करें।

आम

- **अमरूद** के नये पौधों तथा 6 वर्ष से अधिक उम्र के पौधे के लिए प्रति वृक्ष क्रमशः 30 ग्राम और 180 ग्राम नाइट्रोजन का प्रयोग करना चाहिए।

अमरूद

- **केले** में प्रति पौधा 55 ग्राम यूरिया, 155 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट और 200 ग्राम पोटाश मिलाकर मृदा में दें।
- **आंवला** में शूट गॉल मेकर से ग्रस्त टहनियों को काटकर जला दें एवं शुष्क विगलन की रोकथाम के लिए 6 ग्राम बोरेक्स प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

आंवला

- **नीबू** में रोगग्रस्त टहनियां काट दें। फिर 0.3 प्रतिशत कॉपर-ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें। इसके अलावा 3-4 वर्ष से बड़े पौधों को 700 ग्राम यूरिया देने से पहले सिंचाई भी करें।
- **पपीते** की सफल बागवानी हेतु गहरी और उपजाऊ, सामान्य पी-एच मान वाली बलुई दोमट मृदा अत्यधिक उपयुक्त मानी गयी है। इसकी बागवानी के लिए मृदा में जल निकास का होना आवश्यक है। यह फसल जलभराव के प्रति काफी संवेदनशील है।
- पपीते की रोपाई के लिए पॉलीथीन बैग से तीन स्वस्थ पौधों को निकालकर प्रत्येक गड्ढे में त्रिकोणाकार में एक पौधे से दूसरे पौधे की दूरी डेढ़ फीट रखें। प्रत्येक गड्ढे में तीन पौधे इसलिये लगाये जाते हैं, क्योंकि इसमें 50 प्रतिशत नर पौधों की संभावना होती है। बगीचे में प्रत्येक 100 पौधों पर कम से कम दस नर पौधों को निषेचन के लिए अवश्य रखें और कमजोर नर पौधों को उखाड़ दें। अंत में प्रत्येक गड्ढे में केवल एक ही स्वस्थ पौधा रखें।
- बगीचे से अस्वस्थ पौधे निकालकर स्वस्थ पौधे लगाते रहें। खरपतवारों की निराई-गुड़ाई करें तथा पौधों पर मिट्टी अवश्य चढ़ायें। बगीचे को तेज हवाओं, रोग-कीट एवं जल-जमाव से बचाने के यथा संभव उपाय करें। 90 ग्राम यूरिया, 250 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट एवं 110 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश को मिलाकर पौधे के तने से दूर एक इंच गहरा गोलाकार गड्ढा बनाकर प्रत्येक पौधे को क्यारी में लगााने के बाद 2 महीने के अन्तराल पर 6 बार प्रयोग करें।
- पपीते को तना गलन रोग से बचाने के लिए खेत में पानी न खड़ा रहने दें। रोग फैलने पर 2 ग्राम कैप्टॉन प्रति लीटर पानी में घोल कर 17 दिनों बाद छिड़काव करें। ■

नीबू

सगंधीय पौधे

- गुलाब के पौधे की कटाई-छंटाई के उपरान्त कटे भागों पर डाईथेन एम. 45 का 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।
- ग्लैडियोलस के कन्दों को 2 ग्राम बाविस्टिन एक लीटर पानी में घोल बनाकर, 10-15 मिनट तक डुबोकर उपचारित करें। इसके बाद रोपण के समय कंद से कंद 25 सें.मी. तथा पंक्ति से पंक्ति 15 सें.मी. की दूरी एवं गहराई 8-10 सें.मी. रखनी चाहिए। रोपाई से पूर्व क्यारियों में प्रति वर्गमीटर 5 ग्राम कार्बोफ्यूरॉन अवश्य मिलायें। एक हैक्टर रोपाई के लिए लगभग 1.5-2.0 लाख कन्दों की आवश्यकता होती है। आकर्षक रंग के फूल प्राप्त करने के लिए ग्लैडियोलस के खेतों में प्रति वर्गमीटर क्षेत्र की दर से 5 कि.ग्रा. कम्पोस्ट, 30 ग्राम नाइट्रोजन, 30 ग्राम फॉस्फोरस तथा 20 ग्राम पोटाश का प्रयोग करना चाहिए।
- गुलदाऊदी पर जल्दी आई कलियों को तोड़ दें, ताकि बाद वाले फूल बड़े आकार के हों।
- डहेलिया को गमलों में लगा दें तथा घास के लॉन में बारीक कटाई के बाद हल्का यूरिया छिड़कें।
- किसान भाई खेती के साथ-साथ घर के आसपास फूल भी उगायें। इससे वातावरण सुंदर होता है और मन को शांति मिलती है। सितम्बर में बोई नर्सरी से पौध को गमलों या क्यारियों में लगा दें। सर्दियों में खिलने वाले फूलों को अक्टूबर में भी लगा सकते हैं।

गुलाब

ग्लैडियोलस

डहेलिया

कृषि खबरें, देश-विदेश की

पुलासा मछली पर गहराता संकट

गोदावरी नदी में प्रचुर मात्रा में पाई जाने वाली पुलासा मछली का जीवन अब गहरे संकट में है। स्वास्थ्यवर्धक फैटी एसिड, प्रोटीन एवं महत्वपूर्ण खनिजों से भरपूर 'पुलासा' मछली अब लुप्तप्राय होने क कगार पर पहुंच चुकी है। मछली पालन विभाग की अतिरिक्त निदेशक के

अनुसार, पिछले दो दशकों में पुलासा का अनियंत्रित शिकार बढ़ा है। बढ़ती मांग के चलते स्थानीय मछुआरे नदी के घने तटवर्ती इलाकों में रात-दिन जाल बिछाकर बड़ी संख्या में इस दुर्लभ प्रजाति का दोहन कर रहे हैं। वर्ष 1990 के दशक में गोदावरी में पुलासा की संख्या इतनी अधिक थी कि उसे पकड़ना बेहद आसान था, लेकिन अब प्रत्येक दिन इसकी आवक घटती जा रही है।

वैज्ञानिक शोध भी इस चिंता को पुष्ट करते हैं। 145 वर्ष पुरानी डच वैज्ञानिक पत्रिका 'एल्सेवियर' में प्रकाशित अध्ययन में स्पष्ट किया गया है कि नदी में पानी का कम बहाव, भारी तलछट का जमाव, प्रजनन एवं नर्सरी क्षेत्रों का प्रदूषण तथा प्रवास मार्गों में रुकावटें पुलासा की वृद्धि को बाधित कर रही हैं। साथ ही, अवैध मछलीपालन और बिना प्रबंधन के मछुआरों के जाल नदी के पारिस्थितिकी तंत्र को भी प्रभावित कर रहे हैं। इन कारणों से इस मछली का जीवन संकट की स्थिति में पहुंच गया है।

विशेषज्ञों का सुझाव है कि पुलासा को बचाने के लिए तत्काल संरक्षणात्मक कदम उठाए जाएं। नदी में मछली पकड़े जाने की सीमित मात्रा निर्धारित करके कड़ाई से पालन किया जाना चाहिए। इसके साथ ही नदी के महत्वपूर्ण प्रजनन क्षेत्र संरक्षित जोन घोषित किए जाने चाहिए और स्थानीय मछुआरों को वैकल्पिक आजीविका व प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए। प्रभावी नीतियों के बल पर इस अनमोल जलीय जीव को बचाया जा सकता है। ■

आहार की थाली से दूर हो रहा फाइबर

बदलती जीवनशैली और असंतुलित खानपान ने आहार से फाइबर जैसे महत्वपूर्ण पोषक तत्व को धीरे-धीरे दूर कर दिया है। पहले जहां थाली में श्रीअन्न, फल और ताजा सब्जियां होती थीं, वहीं अब उनकी जगह प्रोसेस्ड और पैकेज खाद्य उत्पादों ने ले ली है। इस बदलाव का असर लोगों के पाचन, प्रतिरक्षा प्रणाली और संपूर्ण स्वास्थ्य पर साफ देखा जा रहा है। विशेषज्ञों के अनुसार, आहार में फाइबर की मौजूदगी केवल पाचन सुधारने तक सीमित नहीं है, यह आंतों में मौजूद लाभकारी बैक्टीरिया को पोषण देने, वजन नियंत्रित रखने, ब्लड शुगर संतुलित करने और हृदय रोगों से बचाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हाल के

शोध बताते हैं कि यह समस्या न केवल भारत में, बल्कि वैश्विक स्तर पर एक गंभीर पोषण संकट का रूप ले रही है। ऑल इंडिया इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज (एम्स), हार्वर्ड और स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय से जुड़े एक विशेषज्ञ के अनुसार, अमेरिका में लगभग 95 प्रतिशत लोग अपने दैनिक आहार में आवश्यक मात्रा में फाइबर नहीं लेते। इसकी कमी से पाचन तंत्र, रोग प्रतिरक्षा प्रणाली और मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

आज अधिकांश लोग रिफाइंड अनाज, इंस्टेंट फूड, बिस्कुट, स्नैक्स और चीनी से भरपूर खाद्य उत्पादों का अधिक सेवन करने लगे हैं, जिनमें फाइबर की मात्रा नाममात्र होती है। जानकारी के अभाव में लोग यह नहीं समझ पाते कि फाइबर की निरंतर कमी से शरीर आवश्यक पोषक तत्वों को ठीक से ग्रहण नहीं कर पाता, जिससे गैस, कब्ज, वजन बढ़ना, हृदय संबंधी और अन्य रोगों का जोखिम बढ़ जाता है। ऐसे समय में आवश्यक है कि लोग अपने आहार में साबुत अनाज, दालें, फल और सब्जियां शामिल करें और इस बढ़ती पोषण समस्या से समय रहते सतर्क हो जाएं, ताकि स्वस्थ और संतुलित जीवन की ओर लौट सकें। ■

सीबकथॉर्न और हिमालयी कुट्टू के बीजों का अंतरिक्ष में परीक्षण

लद्दाख की ठंडी रेगिस्तानी भूमि में उगने वाले पौधों-सीबकथॉर्न और हिमालयी कुट्टू (बकव्हीट) के बीज अब अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन (ISS) पर वैज्ञानिक परीक्षण का हिस्सा बन गए हैं। यह प्रयोग नासा के क्रू-11 मिशन के तहत किया जा रहा है। इस प्रयोग का उद्देश्य अंतरिक्ष जैसी सूक्ष्म गुरुत्वाकर्षणयुक्त परिस्थितियों में बीजों के व्यवहार, अंकुरण और विकास को समझना है। बीजों को एक विशेष

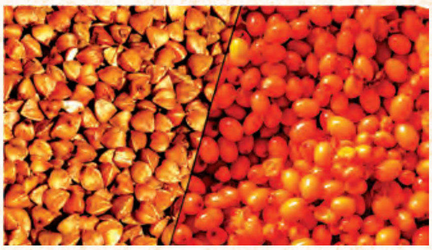

तकनीक द्वारा तैयार कर अंतरिक्ष में भेजा गया है, जहां वे निर्धारित अवधि तक गुरुत्वीय प्रभाव से मुक्त वातावरण में रखे जाएंगे। भारत की ओर से इन बीजों की आपूर्ति बेंगलुरु स्थित स्टार्टअप प्रोटोप्लैनेट द्वारा की गई है। मिशन पूरा होने के पश्चात, बीजों को क्रू-10 मिशन के माध्यम से वापस पृथ्वी पर लाया जाएगा, जहां भारतीय वैज्ञानिक इन पर गहन अध्ययन करेंगे। इस विश्लेषण से अंतरिक्ष में संभावित कृषि कार्यों और जैविक अनुकूलन के बारे में मूल्यवान जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

इस अंतर्राष्ट्रीय अभियान में भारत के अलावा मालदीव, पाकिस्तान, अर्जेंटीना, ब्राजील, कोस्टा रिका, ग्वाटेमाला, नाइजीरिया, आर्मेनिया और मिस्र जैसे 11 देशों की भागीदारी है।

सीबकथॉर्न: इसके फल आकार में छोटे होते हैं, लेकिन पोषण में अत्यंत समृद्ध। इनमें विटामिन 'ए', 'सी' और 'इ' के साथ ओमेगा फैटी एसिड्स भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं। इसे 'सुपरफ्रूट' भी कहा जाता है। यह बंजर और शुष्क भूभाग में भी अच्छी उपज देता है।

हिमालयी कुट्टू: यह एक ग्लूटन-फ्री अनाज है, जो प्रोटीन और एंटीऑक्सीडेंट्स से भरपूर होता है। यह मधुमेह रोगियों के लिए लाभकारी माना जाता है और उपवास में परंपरागत रूप से उपयोग में लाया जाता है। ■

प्रस्तुतिः गजेन्द्र

पंजीकरण संख्या 14252/57 पंजीयक, समाचार पत्र, भारत सरकार
दिल्ली पोस्टल पंजीकृत संख्या DL(C)-12/1145/10-12
ISSN 0023-1088
मूल्य: ₹50

डा. अनुराधा अग्रवाल, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स चन्दु प्रेस, 469, पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली-110092 से लेजरटाईपसैट एवं मुद्रित। संपादक: सुनीता अरोड़ा